माथुर—

कवित्त संग्रह

संग्रहीत—कन्हैयालाल जी माथुर।



मू० ।≈)

प्रकाशक :—
हिन्दी पुस्तकालय, मथुरा।

* श्री राधे वृन्दावन बिहारिणे नमः *

माथुर ज्ञान कबित्त संग्रह

पहिला व दूसरा भाग

मुंशी कन्हैयालाल "माथुर" कायस्थ बसवा साबिक़
अफ़सर पुलिस रियासत जयपुर रचित ।

इसमें
ईश्वर सम्बन्धी व प्रस्तावी, नीति, ज्ञान, शिक्षा के निहायत उम्दा २ छटे हुए कबित्त, सवैया, सैकड़ों प्राचीन कवियोंके संग्रह किये गये हैं ।



रचयिता व संग्रह कर्ता:—
'रासिक सरोवर' 'माथुर रसिया संग्रह' 'माथुर प्रेम तरंग' 'बिच्छू की दो सौ दवा' 'माथुर भजन हज़ारा' 'माथुर ध्यान कवित्त' 'माथुर नीति शतक' 'माथुर कवित्त संग्रह दो भाग नावल तरंग नौजवानी'

प्रकाशक—हिन्दी पुस्तकालय, मथुरा ।

प्रथमवार
२००० | सन् १९३४ ई०

❀ श्री राधा कृष्णाय नमः ❀

❀ भूमिका ❀

पाठकवृन्द ! अगरचे आज तक कवित्तों के सैकड़ों ग्रंथ छप चुके हैं, मगर उन में नीति शिक्षा, व ईश्वर सम्बन्धी कवित्त, सवैया बहुत कम होते हैं, और अगर ऐसे दो चार ग्रंथ हैं भी तो उनमें बहुधा अशुद्ध, वा मूल्य विशेष। इस लिये मैंने हस्त लिखित वा मुद्रक ग्रंथों से प्राचीन कवियों के कवित्त, सवैया जो तीस बरस से संग्रह कर रहा हूं शुद्धता पूर्वक इसमें दर्ज़ किये है। श्री कृष्ण महाराज के ध्यान के १०८ कवित्त तो सिवाय इस पुस्तक के और कहीं मिलैंगे ही नहीं, (मिसरा) मैंने वो फूल चुने हैं, जो गुलिस्तां में नहीं। और इसका पूरा खयाल रक्खा गया है कि शौक़ीन मिज़ाजों के पसन्द के रस कवित्त बिलकुल ही नहीं लिखे हैं उनका एक ग्रंथ दूसरा तैयार कर रहा हूं। आशा है, कि आप इसकी क़द्र फ़रमा कर मेरे उत्साह को बढ़ावेंगे, जिस से इसका त्रतीय व चतुर्थ भाग भी जल्दी आपकी सेवा में पेश करूँ, जिन कवियों के कवित्त इसमें संग्रह हुए हैं उनके थोड़े से नाम एक सवैया में दर्ज करता हूं।

❀ सवैया ❀

केशव, ठाकुर, ब्रह्म, पुषी; रसिकेश, दयानिधि है रिषिनाथ। 'माथुर' दास, लला, रसखान; रसीले घनानँद, गोकुल नाथ ॥ आलम, नाहर, औ पद्माकर, देव, हरीचँद, गंग, सनाथ ॥ श्री मधसूदन, दूलह, श्रीपति; मंडन, शिम्भु, हरी रघुनाथ ॥

जो त्रुटियां इस वक्त़ रह गई होंगी वह दूसरे संस्करण में दुरुस्त कर दी जावैंगी।

जयपुर
[राजपूताना]
दिसम्बर १९३४

संग्रहकर्त्ता—
मुन्शी कन्हैयालाल 'माथुर' कायस्थ,
बसवा।



❀ श्रीराधे वृन्दावन विहारिणे नमः ❀





मुन्शी कन्हैयालाल माथुर रचितः—

माथुर ज्ञान कवित्त संग्रह

प्रथम भाग।

(बंदना के कवित्त सवैया)

छप्पय श्रीनाथ जी ॥ १ ॥

जय जय श्री गिरिराज धरन, श्रीनाथ जयति जय ॥ देव दमन जय नाग दमन, जय शमन भक्त भय ॥ जय श्री राधा प्राण नाथ, श्री बल्लभ प्यारे ॥ श्री विट्ठल के जीव, जैति यशुदा के बारे ॥ श्री बल्लभ कुल के पर्म निधि, भक्तन के बहु सुख करन ॥ नित नव निकुञ्ज लीला रचन, जय जय श्री गिरिबर धरन ॥

सवैया श्री प्रियाजी ॥ २ ॥

भूषन सारे सँवारे जराऊ, तिन्हें लखि तारे लगैं अति फीके ॥ त्यों 'द्विज देव' जु आनन की छवि, अङ्ग सबै शरमायँ शशी के ॥ ताहु पै भानु प्रभा निदरैं, लखि चंचल कुण्डल कानन नीके ॥ मोह मई तम क्यों न मिटै, इम ध्यान धरे वृषभान लली के ॥

सवैया ॥ ३ ॥

जो शुभ बानी बसै विधि संग, सदां सिव अङ्ग लसै सु भवानी ॥ जो कमला कमला पति के सँग, देव सचीस सची सुख मानी ॥ दीप शिखा ब्रज मन्दिर सुन्दर, जागत जोत सबै जग जानी ॥ साधु की साधिका, सिद्धि समाधिका, सो ब्रजराज की राधिका रानी ॥

कबित्त श्री गणेश जी ॥ ४ ॥

कुंडलित सुन्ड गंड भुन्डत मलिन्द वृन्द, बन्दनि बिराजै मुन्ड अद्भुत मति को ॥ बाल शशि भाल तीन लोचन विशाल राजै, फणि गन माल शुभ सदन सुमति को ॥ ध्यावत बिनाँ ही श्रम लावत न बार, नर पावत अपार भार मोद दम्पति को ॥ पाप तरु कन्दन को, बिघन निकन्दन को, आठौ जाम बन्दन करत गनपति को ॥

कबित्त श्री शिवजी ॥ ५ ॥

बठौ मरघटन जटा जूटन लपेटे तन, धूर सों धुरेटे गरे मुण्डन की माल है ॥ अंग लाए भसम खसम तीनों लोक हू को, घरमें ख़ज़ानों ख़ाक खप्पर अरु खाल है ॥ उरमें उरग हार, बिष को करै अहार, संग अरधंग सोहै, शशि मुखी बाल है ॥ भौन में न भाँगो, सदाँ रहत है नाँगो, याहि सब ही कहैं माँगो, माँगे करत निहाल है ॥

कबित्त ॥ ६ ॥

आम सो न फल, गङ्गा जल सो न जल, और मन सो न भृंगी, जो भ्रमत रहै भृंगी सौ ॥ 'श्रीपति' सुजान जान काजी से न और काजी, ताजी से न बाजी, औ जहाजी ना फिरंगी सो ॥ चन्द सो न ताप हर, कंस सो न पाप कर, चापधर नाहीं कोई अंखियन खंगी सो ॥ अरजुन सो न जङ्गी, गुरु-नाद सो न अंगी, अरु पुन्न्य सो न संगी कोऊ देवन त्रिभङ्गी सो ॥

कबित्त ॥ ७ ॥

पंच मुख आप षट मुख गज मुख पूत, सुन्दर प्रवीन रूप देखे मन भर में ॥ बाहन बिचित्र बसैं,परम बिरोधी संग,सम्पति की ठौर एक कौड़ी हू न कर में ॥ भूषन भुजंग के बिराजत अमोल अङ्ग, बरनों कहा जो कछू नीको लखो हर में ॥ किहिं बिधि जीवन दिगम्बर को हो तो यह, देवी अन्न पूर्ना सी जो न होती घरमें ॥

कबित्त दुर्गा भवानी ॥ ८ ॥

सत्त्य तू सती तू सरवज्ञ तू सनातन तू, स्वाहा तू सुधा तू शक्ति शारदा सयानी तू ॥ सीता तू सदा तू प्राणदा तू, अन्नदा तू नित्त्य, धन्न्य धनदा

तू, रिद्धि सिद्धि बरदानी तू ॥ अखिल जक्त पाली कवि 'किशोर' मात काली, बिकराली मुण्ड माली मुनि मन मानी तू ॥ मोह तू मया तू जोग माया तू जोगेश्वरी, सुरी तू सिरी तू श्री महेशुरी भवानी तू ॥

सवैया हनुमानजी ॥ ९ ॥

लाल लँगोट विशाल बन्यो, शुचि भाल सिंदूर महा छबि छाजैं ॥ त्यों जगदीश बड़े भुज दण्ड, अखण्ड धरे गिरि गुर्ज समाजैं ॥ भक्त सदाँ शुचि शाह करैं, दुति दारुण देखि निशाचर लाजैं ॥ या विधि ध्यान धरैं हनुमान सुजान सबै तन सङ्कट भाजैं ॥

छप्पय श्री सूर्य्य नारायण ॥ १० ॥

कनक बरन सम रंग, भक्त जन पाप निवारन ॥ तारा शशि द्युति छीन करन शत पत्र बिकासन ॥ विबिधि व्याधि अरि हरन कोक मद किरन हरत है ॥ कच्छप सुत आदित्य कुमद दुख केर पवन पैं ॥ अति चंड किरन सारथि अरुन, सरनागत आरत हरन ॥ समन सीत दिन लोक पति जय जय जय मङ्गल करन ॥

कबित्त श्री जमुनाजी ॥ ११ ॥

भव भय खंडन, कलिंद गिरि नन्दनि, औ बन्दन त्रिलोक देव वृन्द परसत है ॥ पुन्य की पताका करे पापन के साका तीर तरल तमाल द्रुम सोभ सरसत है ॥ सब जग जानी चारों बेदन बखानी, महा मुनि गन मानी, मन मोद बरसत है ॥ मुकट के छन्द धरै, आनँद के कन्द तहां, राधिका गुबिन्द बुन्द बुन्द दरसत हैं ॥

कबित्त श्रीगङ्गाजी ॥ १२ ॥

करम को मूल तन, तन मूल जीव, जग जीवन को मूल अति आनँद उघरिबो ॥ कहै पदमाकर सु आनँद को मूल राज, राज मूल केवल प्रजा को भौन भरिबो ॥ प्रजा मूल अन्न, सब अन्नन को मूल मेघ, मेघन को मूल एक जग्य अनुसरिबो ॥ जग्यन को मूल धन, धन मूल धर्म्म, अरु धर्म्म मूल गंगाजल बिंदु पान करिबो ॥

कवित्त ॥ १३ ॥

भूपन को सार सरबस सूरता है, अरु सूरता को सार जंग बैरिन बिदा-

रिबो ॥ सार अरि मार मारिबे को कीरति प्रचंड, सार बसुधा को भांति धा को बस ढारिबो ॥ सार बसुधा को भांति भांति बस्तु लीधो जोर, जोरबे को सार द्विज भौन दान गारिबो ॥ दानन में सार नित्त शुद्ध होय जाते चित्त, शुद्धता को सार गिरधारी उर धारिबो ॥

श्री कृष्ण महाराज के ध्यान के कवित्त सवैया की माला ।

कवित्त १४

रसिक रंगोले भली भांतिन छबीले घन, आनँद रसीले भरे महा सुख सार हैं ॥ कृपा धन धाम श्याम सुन्दर सुजान मोद, मूरत सनेही बिनाँ बूझे रिझवार हैं ॥ चाह आल बाल औ अबाह के कलप तरु, कीरत मयंक प्रेम सागर अपार हैं ॥ नित हित संगी मन मोहन त्रिभंगी, मेरे प्रानन अधार नँद नंदन उदार हैं ॥

कवित्त सिंहाविलोकन १५

अटकें मुकुट लांबी लटके हलक लसैं, भोंहँ में कटीले भरे भाव नट खट के ॥ खटके हिये में छुटे चटके छबीले छोर, भटके से ऊधौ हैं निकट बन्सी बट के ॥ बट के बेचारे केते हटके रहे हैं ठाम, रूप रस तच्छिन कटाच्छिन के कट के ॥ कट के सो नट के नयन नीके नट के, समान घन कट के हमारी ओर अट क ॥

कवित्त ॥ १६ ॥

मंजुल मुकुट के निकट घरी एक रह्यौ, उतते उचट लौनी लटन में लटि गो ॥ कहै बलभद्र लौनी लट तैं उलटि फिरि, ग्रीवा कल कंठ की निकाई में सिमटिगो ॥ भूल्यो भूल्यो फिरयो फेरि ग्रीवा कल कंठ हूं ते, नाभी सर सीढिन पै पहोंचत रपटिगो ॥ अटि को न मेरो मन डटिगो तहाँ ही आली, कटिके निकट पीत पट में लिपटिगो ॥

कवित्त शृंगार राधारमन ॥ १७ ॥

हीरन के हार की अपारद्युतिअङ्गअङ्ग, ललित त्रिभंग निज कोमल अगार है ॥ ताश की इजार, तापै काछिनी कछी है चारु, बाँसुरी अधर धार, नटवर दार है ॥ भोंह छतनार, नैना खंजन से पंक दार, छूटयौ लट बार है, कपोल-

न के पार है ॥ कुन्तल सिंगार, कानकुन्डल मयूरा कार, जटित जड़ाऊ सीस जूड़े की बहार है ॥

कवित्त ॥ १८ ॥

जटित जड़ाऊ जगमगत पटाऊ सीस, जाहर जलूस निज कलगी मयूर की ॥ जौहर जवाहर के कुण्डल जरब दार, ज़ालिम जुलफ ज़ोर जोवन गुरूर की ॥ कजदार भौंहैं ज़ेर जहरी जुलम आँख जलज बुलाक़ ज़ेब होंठन के नूर की ॥ जंघन के ज़रदार ज़रतारी जाँघिया पै विजली की जोत होत हालत कपूर की ॥

कवित्त ॥ १९ ॥

बाँकी भाल बेंदी, भों हैं भृकुटी जड़ाऊ बाँकी, बाँकी सिर पेच पाग मोर पच्छ टाँकी है ॥ बाँकी श्रौन कुण्डल औ कुन्तल अलक बाँकी, दृग की चला की भरी ऐन सुखमां की है ॥ " निज " कवि नासिका की, जलज बुलाक़ बांकी, अधर सुधा की छाकी, बांसुरी अदा की है ॥ पीताबर पटुका की, ललित त्रिभंग ता की, राधा रौन प्यारे थांकी, झांकी अति बांकी है ॥

कवित्त ॥ २० ॥

शोभा को सदन महा मङ्गल बदन मति, मोहक मदन नंद नन्दन मुरारी है ॥ गावै पाक शासन औ पोषन हुताशन त्यों, उर पंकजासन में ध्यावै त्रिपुरारी है ॥ कहै ' तोष ' हरषो अनंग के उमंग युत, राधिका के संग रंग बरसत भारी है ॥ भक्त मोद कारी त्यों मयूर पच्छ धारी भारी, ओट सो हमारी धन्य रसिक बिहारी है ॥

कवित्त ध्यान ॥ २१ ॥

कोमल हँसन, कर मुरली लसन, कटि काछिनी कसन, बिसरै न कान्ह नट की ॥ भूलै कुल कानि, छुटि जाय सब बानि, जब चित चढ़ै आनि, फहरानि पीत पट की ॥ ' केस ' कवि काज भूल्यो, सखिन समाज भूल्यो, माधुरी मुरति, मन मोहन की अटकी ॥ साजन तिलक की, बिसारी बिसरै न मोहि, बाँसुरी की बाजनि,बिराजनि मुकुट की ॥

कवित ॥ २२ ॥

बन्शी वटतर नटवर भेष धरैं ठाड़े, देखत हो एई जसुमत के दुलारे हैं ॥ गोधन चरैया एई, चीर के हरैया एई, गुंजन धरैया एई, कुंजन बिहारे हैं ॥ येई मन चोर, येई माखन के चोर, येई रघुनाथ गोपिन के, आँखिन के तारे हैं ॥ येई पीत पटबारे, येई हैं मुकुट वारे, ब्रज में सुनत हो सो, येई कान्ह कारे हैं ॥

कवित ॥ २३ ॥

चमक बिशाल चारु, बन माल चौलरे की, पीरी कटि काछिनी , सुहाई छटा छन में ॥ जुलफ़न काली पै, सुरंग अलबेली पाग, छोर दुपटा की, फैह-रान त्यों गमन में ॥ नख शिख रूप को, प्रकाश 'लछीराम' रह्यो, हरष हमारो मन, हलकै चपन में ॥ राम की दुहाई, छवि रोम रोम छाई, माई जादूगर ज़ालिम, कन्हाई मधुबन में ॥

कवित ॥ २४ ॥

कहत कहा तू सुनि परतन मोकों कछू, बाँसुरी शबद कल कानन में भरिगो ॥ आँखिन में सांवरो, स्वरूप बनमाल बन्सी, पीत पट कुण्डल मुकुट धरे धारिगो ॥ 'देवकी नँदन सिंह' ओर अविलोकों कैसे, एरी आज लाज गेह काज नेह टारिगो ॥ चाहे सखी सोना, अब हों ना रहयो भौ ना, वा सलौना मोपैं नन्द को, ढिटौना टौना करिगो ॥

कवित ध्यान ॥ २५ ॥

झलकत बादला झलमलात सोहै जनु, दीपति सों दिपतिं दिनेश दर-सायौ है ॥ 'सरसुति' कहै हद हीर सिर पेच जहँ, कलित कलान सों कला-निधि सुहायो है ॥ सीस झुकी लाल चूनरी की पाग बाँधन में, बूंदन को भाव हम एसो लखि पायो है ॥ सुन्दर गोविंद के अमन्द मुख चन्द पर, रीझि कै बिधाता मनों रंग बरसायो है ॥

कवित ॥ २६ ॥

जैसी छवि छलकत साँवल सलोंने अंग, तैसी ना बिलोकी कहुँ मेघन के ठट में ॥ दमकत दामिनि करोरनि में ऐसी है न, जैसी द्युति देखियत बनें पीत पट में ॥ फँसि फँसि जात बनमाल में उरझि मन, सरसुति देख्यो बहै जमुना के तट में ॥ मांथे मोर चन्द्रिका के मिस सों ठगोरी ठान, राखी जिन नैनन की चन्द्रिका मुकट में ॥

कवित ॥ २७ ॥

भाल तट निकट मुकट लटकन पर, तिलक चिलक चटकनि दुख दरिगो ॥ छबि छलकनि, घुंघुरारी अलकनि, मदमाती पलकनि, चख चेटक सो करिगो ॥ अधर के रंग मंजु, मुरली के संग अङ्ग, अङ्ग के तरङ्ग चित्त, औचक सी भरिगो ॥ करिगो खिलौना, हमैं टौना कै ढुटौना वह, मन्द म्रदु हास कै, बिलास हिय हरिगो ॥

कवित ॥ २८ ॥

चाइ भरो प्यारो मुख चाहि न सकत चख, होत जहाँ माते दुहूं नैनन झका झकी ॥ भौंहँन के भङ्ग सङ्ग अज हूं भ्रमत भूले, बरुनी बिरुझि पलकन के धका धकी ॥ केसरि के खौर आइ लीने अति छाइ २, छबि की छकानि छिन छिनन छका छकी ॥ कुंडल झलक प्रति छलक कपोल तल, अलक चिलक चक चोंधनि चका चकी ॥

कवित ध्यान ॥ २९ ॥

ठाड़ो कुञ्ज द्वार में 'दिनेश' नन्द को कुमार, रही न सँभार चाहि चल्यौ चित्त चाय कै ॥ चरम चिताय नूपरन सों विताय बल, कंकन उरझ किंकनी सों उरझाय कै ॥ कटि कटि ऊपर निपट लट नाभि परयौ, छबि साथ उमग्यो रह्यौ सुउर आइ कै ॥ भरे अनुराग देखि भाग भरे कुन्तलनि, परयौ पाग पेच में कुपेच मन जायकै ॥

कवित ॥ ३० ॥

साँवल गुलाब रङ्ग रैनी अङ्ग चन्द उदय, अहा कहा महा रूप पानिप

निकाई है ।। बेसरि बिलास लोल लोचन मधुर हास, हिये के हुलास की गुराई मुख छाई है ।। त्यौरी की तरंग भ्रुव भंग में अनङ्ग कोटि, कौतिक करत मुसक्यान छैल ताई है ।। चायन चुचात ललचात लपटात मन, बन्सीधर माधुरी अनूप पानि पाई है ।।

कवित ।। ३१ ।।

हाथ में लकुट कैसी लटक सों आवै माई, गायन के पाछे कोटि २ छवि धरी है ।। बाँसुरी बजावै चाह दूनी उपजावै, हम कहाँ जांय ब्रज ते, हमारी मति हरी है ।। पीत पट सोहै प्रीति फंद नर नारिन को, मुकट की शोभा कछू औरै गति करी है ।। ता पै लाय चन्दन की खौर भाल मोहन के, गोपिन की लाज के जसोधा पाछें परी है ।।

कवित ।। ३२ ।।

ऐंड भरयो आबत लड़ैतो ब्रजराज जू को, पाग को सँवारै औ निहारैं अङ्ग अङ्ग है ।। कंठी मध्य नग नीचे लुलित ललित मोती, मंजुल मुकर उर उभलत रंग है ।। तन सुख झङ्गा झुकि दाबन दबाये लेत, लोचन लुनाई पूर पूरत अनङ्ग है ।। फेरत कुसम छरी फिरयो जात मन इतै मैं तो यह जानी कछू हुँदर फिरङ्ग है ।।

कवित्त ध्यान ।। ३३ ।।

बागो चीरा सेत हेत, हिय को जताये देत, कहै कहा कोऊ छवि नन्दके दुलारे की ।। पटुका इजार लाल, भूषन बनाव बहु, चटक मटक चोंप चौगुनी सवारे की ।। दसों दिशि छाय रहीं सौरभ तरंगन सों, दरस सरस गति नैनन के तारे की ।। झूमि २ झांकैं, प्यारी नख सिख बाँकै, भारी भूलत न आँखें, अजैं झुकनि जवारे की ।।

कवित्त ।। ३४ ।।

सखिन समाजैं ब्रजराजैं ब्रजराज आज, कैसे नीके सजनी बिराजैं माँथे मोर पर ।। बरन बरन नये ऊदे हरे पीले लाल, चंद्रिकान मण्डल छबीले छबि छोर पर ।। लोचन ललाके अरसोहैं बिन देखे मोपै बीतत अमावस को

दुख ज्यों चकोर पर ॥ लाख लाख आँखि वारों आँखिन की कोर पर, कोटि कोटि काम वारौं पलक मरोर पर ॥

कवित्त ॥ ३५ ॥

छवि की मरूर तैं न सूधे कोहू चाहत है, जोबन उमंग अंग अंग छवि न्यारिये ॥ सीस फैंटा ऐंठवाँ अमैंठ पीत पट बाँधे, काँधे सेली दोबर सुखद गुन धारिये ॥ हैं तो रही मोहि मोहि रही ना सुरत कछु, देखत हैं देखिबे की साधन बिसारिये ॥ नन्द को किशोर चितचोर मोरपंख वारो, ऐरी वा मरोर पै करोर वारि डारिये ॥

कबित्त ॥ ३६ ॥

नैनन में नैंन कहूं चैनन ही बेध लेत, सैनन समेत है करै न सुधि यारी की ॥ केसरि की आड़ जिय आह आड़ तोरत है, बेसरि करन ही को बेसरि तयारी की ॥ अटकाइ अटकाइ अधर ही लटकाइ, राखत है मन यह बानि लटिकारी की ॥ बल्लभ रसिक मुसकानि बाँधि लेत तऊ, जीवन जियारी है पियारी ही बिहारी की ॥

कबित्त ध्यान ॥ ३७ ॥

बिन गुण माल वारे, अधरन लाल वारे, तिलकन भाल वारे, शोभा सुख सारे हैं ॥ गिरजात नाल वारे, मूरति विशाल वारे, चलन मराल वारे, द्रग अति चारे हैं ॥ कारे रंग वारे प्यारे, पीरे पटवारे, 'पुखी,' सटकारी लट वारे, मोह दोह डारे हैं ॥ बार पर वारे, चित चोर पर वारे, सुन मोर पर वारे, तेरे मोर पर वारे हैं ॥

कवित्त ॥ ३८ ॥

पीत पट वारो, नट नागर चटक वारो, जमुना निकट वारो, चोर चित वारो है ॥ चाल को चटक वारो, भ्रकुटी मटक वारो, गोधन हटक वारो, श्याम रँग वारो है ॥ कंस को खटक वारो, पूतना पटक वारो, व्याप घट घट वारो, सब रस वारो है ॥ बन्सी बट तट वारो, मंजुल मुकट वारो, मोर पंख वारो, सो हमारो रखवारो है ॥

कवित ॥ ३९ ॥

सुन्दर सुजान पर, मन्द मुसकान पर, बाँसुरी की तान पर, ठौरन ठगी रहै ॥ मूरति बिशाल पर, कंचन की माल पर, खंजन सी चाल पर, खौरन खगी रहै ॥ भौंहैं धनु मैंन पर, लौने युग नैंन पर, शुद्ध रस बैन पर, 'वाहिद' पगी रहै ॥ चंचल से तन पर, साँवरे बदन पर, नन्द के नँदन पर, लगन लगी रहै ॥

कवित ॥ ४० ॥

मोर को मुकुट, मुक्तान के वे अवतंस, रोम रोम रूप मनों मन मथ मई है ॥ काछनी रुचिर रुचि, सोहै पीत पट शुचि, चटकीली अङ्ग पर, अति छबि छई है ॥ कहै कबि 'गंग' बनी बानिक बिबिधि भाँति, आभा तिहूं लोक की सु एक ठौर भई है ॥ मणि मन मोहन के कंठ में यों झलकत, जानिये जुन्हैया जमुना में फैलि गई है ॥

कवित ॥ ४१ ॥

माँथे मोर मुकुट, लकुट कर बन माल, उर में बिराजै, राजै कुन्डल त्यों श्रोन में ॥ कहै कबि दूलह, ललित पीत पट काछे, बाँसुरी बजावै, परि हास के हँसौन में ॥ बृन्दावन चन्द, छल छन्द सों निहारी छबि, उमग्यो अनन्द, सो बखान्यों जात कौन में ॥ एक सखी राधे किये, ताके काँधे कर दिये, कान्ह भई डोलै, राधे आधे कुन्ज भौन में ॥

कवित ॥ ४२ ॥

मोर को मुकुट कटि काछिनी लकुट हाथ, तैसो पट पीत सो निपट छबि छायो है ॥ कुण्डल रसाल री नबीन नग जाल माल, भाल में गुलाल लाल लगत सुहायो है ॥ बाँसुरी बजावै आप नाँचै औ नचावै ग्वाल, जाकी चख चाल मन मैंन उमगायो है ॥ होरी के समाज में बिलोकि ब्रजराज बलि, ब्रज बसिबे को बीर आज फल पायो है ॥

कवित्त ॥ ४३ ॥

नन्द जू को नँदन बसत नँद गाँव जाको, नाम सुने आनँद बिनोद

लहियतु री ॥ सुन्दर गोबिंद मुख इन्दु अरविन्द नैन, मन्दिर सुधा को चख, चार चहियतु री ॥ आनन को प्रान सुन्यों रूप को निधान गुन, गाननि सों कान समाधान रहियतु री ॥ बन्सी को बजैया अरु प्रेम उपजैया, बल भैया 'देव' कुँबर कन्हैया कहियतु री ॥

कबित्त ॥ ४४ ॥

चरन करन पर जलज थलज वारों, तारा रवि नख की अतोल झलकन पै ॥ बाहुन पै करी कर, अहि अरगलि वारों, वारों मीन कुण्डल सुडौल ढल कन पै ॥ रामनाथ ओठन पै, पल्लव प्रवाल वारों, मुकर मधुक त्यों कपोल झलकन पै ॥ वारों अहि बाल अलि माल श्याम गुन जाल, बाँकुरे बिहारी की अमोल अलकन पै ॥

कवित ध्यान गोविंद ॥ ४५ ॥

केसर की खौर भाल, मोतिन की उर माल, उरबसी जालनि बिशाल कै जु पैहरी ॥ पहुँची जराऊ हैं, कराऊ गजराऊ पग, पैंजनी ढराऊ, बजिबानी की चुपैहरी ॥ जालदार सोसनी बनी है पाग खूंटे दार, बूँटेदार बागो, खुले बंद को रुपैहरी ॥ मानिक जटित सिर शोभा श्री गुबिंद जू के, मानों फूल फूले हैं तमाल पै दुपैहरी ॥

कवित ॥ ४६ ॥

रूपे को अनूप हौज़ भरयौ है गुलाबन सों, भाँति भांति कोंलन की शोभा एक मेक है ॥ छूटत फुहारे, चहुं ओर ते निहारे, प्यारे कर पिचकारी, प्यारी आनन पै एक है ॥ 'बानी' कहै गुविन्द के सीस पै अखण्ड छत्र, मंडल हजार जल धारन को सेक है ॥ मानों तीनों लोक में अरोक विजय हेत बिधि कीनों मनमथ राज पाट अभिसेक है ॥

कबित्त युगल ध्यान॥ ४७ ॥

गोरी उत राधिका किशोरी बैस थोरी भोरी, वारियत शोभा देखि प्रभा रति कोर की ॥ सोहत गुपाल अरबिंद चन्द सम मुख, बंदन करत सुर नर नाग जोर की ॥ उत नंदलाल कर मुरली लकुट पीत, पट औ मुकट, ताकी छबि

है मरोर की ।। देखी है न सुनी ऐसी भई है न होइ कहूं, तैसी जग मगी जोरी जुगल किशोर की ।।

कवित्त ध्यान जुगल ।। ४८ ।।

बेली द्रुम फूले तामें भौंर फिरैं भूले भूले, अम्ब मौर फूले बनी सुन्दरता बन की ।। जमुना के तीर केलि करैं पिक मोर कीर, बहत समीर लीने दंपति के मन की ।। कवि 'रघुराई' नील सारी तन प्यारी जू के, पीताँबर धारी जू के न्यारी छबि तन की ।। मानों घन घटान में छटा येक दामिनी की दामिनी की छटनि में घटा एक घन की ।।

कवित्त ।। ४९ ।।

सजे हैं सिंगार तन फूले फूलता के हार, हँसैं बार बार बार बीरी मुख पान की ।। सुमनन भार, झुकिरही लता द्रुम डार, ठाड़े कुञ्ज द्वार, कछु गरे धुनि गान की ।। शोभा को न पार, तहाँ और कौन को बिचार, [बारों रति मार, जोरी सुघर सुजान की ।। सुखन के बार, उर बसो मेरे निरधार, नन्द के कुमार, सुकमार वृषभान की ।।

सवैया ।। ५० ।।

सराहैं सुरासुर सिद्धि समाज, जिन्हैं लखि लाजत हैं रति मार ।। महा मुद मङ्गल संग लसैं, बिलसैं भव भार निवार निवार।। विराजै त्रिलोक, निकाई की ओप मुनीश मनोहर रूप अपार ।। सदाँ दुलही बृषभानु सुता, दिन दूलह श्री व्रजराज कुमार ।।

सवैया ।। ५१ ।।

दुरैं दृग देखि मलिन्द के बृन्द, फनिन्द फँसैं कच मेचक फंद ।। गयंदन ते गति मंद नवीन, अमंद लसैं छवि आनँद कन्द ।। करों कर जोर के बंदन हौं, बृषभान कि नन्दिनि नंद के नंद ।। लसैं मधि एक सिंघासन में, मिलि रधिका रानी औ श्री व्रजचंद ।।

सवैया ।। ५२ ।।

हँसैं आरिबिन्द से आनन त्यों, घिरि आवैं चहूं घाँ मलिन्द के बृन्द ।। गुबिंद बिनोद की बातैं करें, सुन के सुख प्यारी के होत अनन्द ।। बड़े दृग

देखि बिकात से जात, चितौत रहैं परे प्रेम के फन्द ॥ सिंघासन एकै लसैं बिलसैं, दोऊ राधिका रानी औ श्री व्रजचन्द ॥

सवैया ध्यान जुगल ॥ ५३ ॥

छहरैं सिरपै छबि मोर पखा, उनकी नथ के मुकता थहरैं ॥ फहरैं पियरो पट बैनी इतै, उनकी चुनरी के झवा झहरैं ॥ 'रस रंग' भरे अभिरे हैं तमाल दोऊ रस ख्याल चहैं लहिरैं ॥ नित ऐसे सनेह सों राधिका श्याम, हमारे हिये में सदाँ ठहिरैं ॥

सवैया ॥ ५४ ॥

इनके पग नूपुर बाजि रहे, उनके रमझोल धुनी धिहरैं ॥ इनके गल गुञ्जन माल लसै, उनके लर मोतिन की हियरैं ॥ इनके लट गोल कपोलन पै, उनके सिर केस छवा छहरैं ॥ 'परशाद' मिले दोऊ आपस में बृन्दावन कुञ्जन में बिहरैं ॥

सवैया ॥ ५५ ॥

दोऊ दुहूं पहिरावत चूनरि, दोऊ दुहूं सिर बाँधत पागैं ॥ दोऊ दुहूं के सिंगारत अङ्ग, गरे लगि दोऊ दुहूं अनुरागैं ॥ 'शंभु' सनेह समोय रहें, रस ख्यालन में सगरी निशि जागैं ॥ दोऊ दुहूंन सों मान करैं, पुनि दोऊ दुहूंन मनावन लागैं ॥

सवैया ॥ ५६ ॥

वे उनको पट पीत उढ़ावत, वे उनको चुनरी पहिरावैं ॥ वे उनको मुख चूमत हैं, अरु वे उनको हँसिके उर लावैं ॥ वे उनके कच कुण्डल ते, झुकि वे नथके उरझे सुरझावैं ॥ मङ्गल धाम यों राधिका श्याम, सदां 'नँदराम' हिये बिच भावैं ॥

सवैया ॥ ५७ ॥

है रति को सुख दायक मोहन, वह मकरा कृत कुण्डल साजै ॥ चित्रित फूलन को धनु बान, त्रयो गुन भोंर की भाँति को भ्राजै ॥ शुभ्र स्वरूपन में गनों एक, विवेक हनै ति ये सैन समाजै ॥ दास जु आज बने व्रज में, व्रज-राज सदेह अदेह बिराजै ॥

सवैया ॥ ५८ ॥

ध्रत कुण्डल गंड प्रचंड कलो, सिर मंड सिखंडम के चँदवा॥ मुरलीधर की मुरली सुनिकै, सुर सों मनों आतुर को फँदवा ॥ सुख मूल विलोकत ही मधुरःध्वज, भूल रह्यौ मनमें मुदवा ॥ कवि 'आलम' आलम आनँद चन्द, सु देखि सखी नँद को नँदवा ॥

सवैया ॥ ५९ ॥

कौन सिंगार है मोर पखा, यह बाल छुटे कच कांति को जोटी ॥ गुञ्जकि माल कहा यह तौ,अनुराग गरे परयो लै निज खोटी ॥ 'दास'बड़ी २ बात कहा करौ, आपने अङ्ग की जानि करोटी ॥ जानों नहीं यह कंचन से, तिय के तन के क़सबे की कसौटी ॥

सवैया ॥ ६० ॥

अलि मोर पखान को मौर धरैं, पियरी पगिया रंग ओर धरयौ ॥ सिर गौरज रेख बड़ी अंखियाँ, परैं गोल कपोलन रूप ढरयौ ॥ लकुटी अभरयौ खरिकामें खरयो, लखि बैनी हमें गलियानि अरयौ ॥ हंसके फरके बसके हिय ते, निकरयो न वहै धंस के निकरयौ ॥

सवैया ॥ ६१ ॥

मूरत मैन की सूरत खूब, सु पूरत दासन की मन आसा ॥ हाथ धरे कटि पै अपने, इक हाथ गोवरधन को नित बासा ॥ बाँधे जरी को परी तनिया, अनियारे झूके दृग देखि तमासा ॥ श्री हरिदेव की माधुरी रूप में, क्यों न करे मन मोर निवासा ॥

सवैया ॥ ६२ ॥

ग्वाल गुपाल घने संगलै, धर मोर पखा झुकि आवत है ॥ कटि किंकिनि हार हमेल लसै, बनमाल विशाल लखावत है ॥ नक बेसरि में मुक्ता लटकें, द्युति कुण्ड सों रवि लाजत है॥ हरिदेव की माधुरी मूरति देखि, सबै दुख देह से भाजत है ॥

सवैया ॥ ६३ ॥

सुन्दर गोल कपोलन पै, अनमोल सु कुण्डल डोलनि प्यारी ॥ ही

हलकै द्युति मोहन की, झलकै सुथरी अलकैं घुंघुरारी ।। वा मुसकानि बिलोकत ही, कुलकानि सबै तजि, होत बिदारी ।। लागि जो जाहिं तो कीजे कहा, सखि ये अँखियाँ रिझवार हमारी ।।

सवैया ध्यान ।। ६४ ।।

मधु कंदन श्री नँद नन्दन जू, सुख कन्दन चन्दन खौरि करी ।। तुलसी दल माल रसाल लसै, निरखैं छबि काम की क्रांति हरी ।। कबि 'आलम' भाल के ऊपर यौं, उपमा सिख चन्द की पांति धरी ।। सुखमा के समूह सरोवर में, मनों फैल फुलेल की बूंद परी ।।

सवैया ।। ६५ ।।

मोरपखा मतिराम किरीट, सो कण्ठ बनी बनमाल सुहाई ।। मोहन की मुसकान मनोहर, कुण्डल डोलन में छबि छाई ।। लोचन लोल बिशाल बिलोकन, को न बिलोक भयो बस माई ।। वा मुख की मधुराई कहा कहौं, मींठी लगै अँखियान लुनाई ।।

सवैया ।। ६६ ।।

अङ्ग त्रिभङ्ग किये मनमोहन, ते मन कोटिक काम हरैं ।। चित चाहि चुभ्यो बृषभान सुता, तन बाँसुरिया गरिगेन धरैं ।। चंचल चारु चलैं कर पल्लव, आलम नैकन नैन टरैं ।। तजि रौम सुचारु सुधाकर पै, मनों नीरज हू दल नृत्य करैं ।।

सवैया ।। ६७ ।।

आइ भले हैं। चली सखियान में, पाई गुबिन्द के रूप की झाँकी ।। त्यों पदमाकर हार दियो, गृह काज कहाँ, अरु लाज कहाँ की ।। है नख ते सिखलों मृदु माधुरि, बाँकी ए भौंह बिलोकन बाँकी ।। आज की ये छबि देखि भटू, अब देखिबे को न रह्यौ कछु बाकी ।।

सवैया ।। ६८ ।।

धीर समीर के तीर खड़े, छबि जात नहीं बरनी अति भारीं ।। हाथ धरे बन्सी कटि में, तनिया छबि जाल लसै अति चारी ।। गुञ्ज हरा बनमाल

गरे, सँग ग्वाल करैं बहु ख्याल खिलारी ॥ रे मन श्री हरिदेव निहारि, वृथा मत भूलिरे मान अनारी ॥

सवैया रूपक ॥ ६९ ॥

श्याम घटा तन जोर छटा, दुपटा पियरो दुति दामिनि छीनी ॥ मोती हरा बग पँक्ति मनोहर, बाँसुरि गाजत मेघ लौं भीनी ॥ छूटि रही अलकैं, ललकैं, धुरवा सम फूल झरैं झर झीनी ॥ श्री हरिदेव ने आज सखी, घनश्याम लजावन की छबि कीनी ॥

सवैया ॥ ७० ॥

कटि के तट में पट पीत लसै, बिलसै बनमाल हिये टटकी ॥ चटकीली ललाके ललाट लसी, वह केशर जासु कला छटकी ॥ घट की सुधि भूलगई सटकी, कुल लाज लखे छवि वा नटकी ॥ अटकी बट में मत देखि भटू, सुभई री लटू न हटै हटकी ॥

सवैया ॥ ७१ ॥

भौंह खरी सुथरी बरुनी, अति शै अधरान बनो रँग रातो ॥ कुण्डल लोल कपोलन में छवि, कुञ्जन ते निकस्यो मुसक्यातो ॥ छूटि गई कुल कान लखे मुख, भूलि गई सब ही सुख सातो ॥ फूटि गयो सिरते दधि भाजन, टूटिगो नैनन लाज को नाँतो ॥

सवैया ध्यान ॥ ७२ ॥

जीवन मूरि जसोमति नन्द के, ग्वाल सखान में प्रान बचारी ॥ गोकुल मण्डन गोपिन के दृग, मोहन माखन चोर मुरारी ॥ बाँसुरी तान अलापैंयही 'लछिराम' गरे बनमाल सँवारी ॥ कामरि बारे अहीर यही, ब्रज बीच विराजत कुञ्ज बिहारी ॥

सवैया ॥ ७३ ॥

सुन्दर नन्द किशोर तरंगन, अङ्ग को संग अनंग गह्यौ ॥ महिला सब मोहि रही महि की, कबि आलम रूप महा उमह्यौ ॥ मसि भीजत कान्ह के

आनन में, लखिस्योम सिरेख को भेष कह्यौ ॥ छवि पूरन इन्दु के मध्यमनों, दुतिया के स्वरूप ह्वै राहु गह्यौ ॥

सवैया ॥ ७४ ॥

मृदु बोलत कुण्डल डोलत कानन, कानन कुञ्जन तैं निकस्यौ ॥ बन-माल बनी 'मतिराम' हिये, पियरो पट त्यों हिय में बिलस्यौ ॥ जबते सिर मोर पखान धरे, चित चोर चितै इत ओर हँस्यौ ॥ तब ते दुर भाज कै लाज गई, अब लालच नैनन आन बस्यौ ॥

सवैया ॥ ७५ ॥

मुकता मनि पीत हरी बनमाल, सु तो सुर चाप प्रकाश किये जन ॥ दामिनि भूषित दीपत हैं, धुरवा सित चन्दन खौर किये तन ॥ 'आलम' धारि सुधामुरली, बरसाय यहां व्रजनारिन को पन ॥ आवत हैं बन से घन से, लखिरी सजनी घनश्याम सुधा धन ॥

सवैया ॥ ७६ ॥

पायन नूपुर मंजु बजैं, कटिकिंकिनि की धुनि की मधुराई ॥ साँवरे अङ्ग लसै पट पीत, हिये हुलसै बनमाल सुहाई ॥ माँथे किरीट बड़े द्रग चंचल, मन्द हँसी मुख चंद जुन्हाई । जय जग मन्दिर दीपक सुन्दर, श्री व्रज दूलह 'देव' सहाई ॥

सवैया ॥ ७७ ॥

लाल इजार हरो अति चारु,झंगा तनमें फबे घूम घुमारो ॥ ता पर पीत पिछोरा दुछोरबा, छोरन पै छवि जाल सँवारो ॥ बाजू कड़े पहोंची मुँदरी, कर बेनु बजावत नैन निहारो ॥ गुञ्ज हरा बनमाल बिलोकि, श्री हरिदेव लग्यो अति प्यारो ॥

सवैया ॥ ७८ ॥

श्री गिरिराज गुहाढिंग देखि, लसैं हरिदेव बने अलबेला ॥ फूलन गुञ्ज बनाय २ सजे सब अङ्ग गुवाल नबेला ॥ दै लकुटी कटि टेक खड़े, घुँघुचीन

हरा उर माँहि हमेला ॥ मोर पखा फहरावन सों, इन कोटि मनोजन की छवि पेला ॥

सवैया ७९

मण्डल मोर किरीट लसै, बिलसै बिधि आनन ओप अधी के ॥ कुण्डल कुन्दन श्रौन दुहूं, कल चंचलता चपला छवि फीके ॥ स्वेद चले मुख मंजु प्रताप, हरैं गति चंचल में बिधि ही के ॥ बाजत पुन्ज मँजीर बिमुन्ज, सु नाँचत कुंज कला निधि नीके ॥

सवैया ८०

चंदन खौर ललाट बिराजत, मोर पखा सिर ऊपर सोहै ॥ सुन्दर गोल कपोल लसै, मुरली के बजावत मो मन मोहै ॥ मोहि बिलोकि बिलोकि हँसै, चित चोर बड़े बड़े नैनन जोहै ॥ पूँछत गोप बधू भगवंत, या सामरो सो यमुना तट को है ॥

सवैया ८१

आनन पूरन चन्द लसै, अर बिंद बिलास बिलोचन पेखे ॥ अम्बर पीत लसै चपला, छवि अम्बुद मेचक अङ्गनि देखे ॥ काम हु ते अभिराम महा, "मति राम" हिये निहचै कर लेखे ॥ तैं बरने निज वैनन सों, सखि मैं निज नैनन सों जनु देखे ॥

सवैया ८२

गुञ्ज हरा 'रिषि नाथ' गरे, कढ़ि कुञ्जन ते छवि पुञ्जन छाइगो ॥ मन्द हँसी है बसी करसी, सरसीरुह लोचन लोल नचाइगो ॥ सूही सजी सिरपै पगरी, लिये फूल छरी इत औचक आइगो ॥ व्है नियरे सियरे द्रग को, पियरे पट को हियरे में समाइगो ॥

सवैया ८३

काछनि लाल कछें छवि जाल, सु तापर पीत पिछोरी कसी है ॥ कुण्डल लोल कपोल सुडोल, लसैआलि के मुख मन्द हँसी है ॥ सीस पै मोर के पच्छ

लसैं, कलगी तुर्रा लखि छीन ससी है ॥ श्री हरिदेव की माधुरि मूरति, मो मन माहिं जो आनि बसी है ॥

सवैया ८४

मोर पखान क्रीट बन्यों, मुक्तान के कुण्डल श्रोन विलासी ॥ चारु चितौन चुभी मतिराम, सु क्यों बिसरै मुसकानि सुधासी ॥ काज कहा सजनी कुल कान सों, लोग हँसैं सगरे ब्रज बासी ॥ में तो भई मन मोहन को मुख चन्द लखे, बिन मोल कि दासी ॥

सवैया ८५

गुंज हरा बन माल गरे कटि पीत पट्ट को कसे ज़री दारो ॥ घूंघर वारी लसी जुलफैं, सिर मोर किरीट प्रभान पसारो ॥ मैंन मनोहर 'रंगनपाल,' हरे हँसि मो तन नैंक निहारो ॥ दैगयो सीस ठगोरी अरी, मन लैगयौ लैगयो बाँसुरि वारौ ॥

सवैया ८६

रूप जरी की अमैंठवाँ पाग, लपेटी लरैं मुकता अधिकाई ॥ काछिनि ताश की तंग तनी, तनिया कटि में अति ही छबि पाई ॥ हीरन हार हमेल लसैं, सिर सेखर हीर जड़े झल काई ॥ चन्द की चाँदनी माँझ खड़े, हरिदेव लियो मन मोर चुराई ॥

सवैया ८७

कुण्डल क्रीट कपोलन पै, अलकैं अङ्ग पानिप पुन्ज लसी हैं ॥ काह कहूं कनखैयन हेरन, फेरन आनन मन्द हँसी हैं ॥ श्री बलदेव बिचार करो कछु, रावरे की गति युक्ति जसी है ॥ माधुरि मूरति मोहन की, करि मोहनि सी मन माँहि बसी है ॥

सवैया ८८ युगल ध्यान

माँथे किरीट लसै पट पीत, मृगम्मद राधिका अङ्ग लगावै ॥ केसर सों तन श्याम सुधार के, अम्बर नील महा मन भावै ॥ वे भई पीवु, पिया भये

प्यारी, सुहावन भावन मैंन बढ़ावै ॥ प्यारी के भूषन लाल रचे, अरु लालकी बाँसुरी बाल बजावै ॥

सवैया होरी ८९

फाबि रहे कटि फैंट कसे, करमें लिये कञ्चन की पिचकारी ॥ सीस पै सूर्य से सोहैं किरीट, लसैं तिम बागे बने जरतारी ॥ रोरी भरी लिये झोरी सखा, कटि पीत पिछोरी सुहोरी तयारी ॥ गोप समाज में श्री 'रघुराज,' बिराज रहे बलदेव बिहारी ॥

सवैया ९०

नैंनन व्है श्रुति कुण्डल छ्वै, कल कन्ठन व्है भुज मूलन धावत ॥ गुञ्ज की माल ते काछनी ते, कहि तोष सुपायन में सुख पावत ॥ मो मन मोहन के तन में, मन मे मिलि तान की फेरी लगावत ॥ पावरी ते चढ़ि पाग लों जात, औ पाग ते पावरि लों फिरि आवत ॥

सवैया ९१

मोंर पखा 'मतिराम' किरीट, मनोहर मूरति सों मन लैंगो ॥ कुण्डल डोलनि गोल कपोलनि, बोलनि नेह के बीजनि वैंगो ॥ लोल बिलोचन कोरन सों, मुसकाय इतैं, अरुझाय चितैंगो ॥ एक घरी घन से तन सों, अँखियांनि घनों घनसार सो दैंगो ॥

सवैया ९२

चन्दन खोर पे बिंदु लगाय कैं, कुञ्जन ते निकस्यौ मुसक्यातो ॥ राजति है बन माल गरे, अरु मोर पखा शिर पैं फहरातो ॥ जब ते " रसखान " बिलोकत ही, तब ते कछु औरन मोहिं सुहातो ॥ प्रीति की रीति में लाज कहा, कछु है सो बड़ो यह नेह को नातो ॥

सवैया ९३

श्री घनश्याम सुजान ए साँवरे, रंग सों बेनु बजावत आवैं ॥ मोहनि मूरति मैंन सरवान के, संग सों तान अनेकन गावैं ॥ राजत पीत दुकूल है

सुन्दर, अङ्ग सों वारिज नैंन नचावें ।। भूतल के सुख दैंन सु प्रेम उमंग सों गोपिन रीझ रिझावें ।।

सवैया ९४

कानन कुण्डल माल गरे, संग मंडित गोपिन के कुँवरेटा ।। "देव" गयंद से आवत मंद से, देखि री चंद से नन्द के बेटा ।। काम की दूती पढ़ावत तूती, बनी पग जूती बनात लपेटा ।। पीरो झंगा पटुका बिन छोर, छरी कर लाल ज़री सिर फैंटा ।।

सवैया ९५

कटि काछनी काछे पितम्बर की, धरे मोर पखान को मोर पखा ।। द्विज देव" जू यों दुपटा फहरैं, मनो बोलत विश्व विजय करखा ।। वह कौन धौं माधुरि मूरति वारो, अली छवि नैंनन जाकी चखा ।। विहरैं चहुँ घाँ वन वीथिन बीच, मनों भव भूप को मातो सखा ।।

सवैया ९६

जात सखा संग बेनु बजावत, मोर पखा धर सीस सुधारो ।। बंक तनी भृकुटी अति चारु, महा मृदु बोलन बोलत प्यारो ।। लैं मुरली जुरली मुख सों, मुसक्यात मनों जल जात सवारो ।। वा रस की रस मूरति देखि, कहो किन को मन मोह न डारो ।।

सवैया ९७

बैत गहैं कर में मुरली, त्रिवली अबली वन माल लसी है ।। कटि माँहिं निवारी चमेलिन फूल, निहार 'अनन्द' सों फैंट कसी है ।। सीस पै मैंठवा पाग लसै, तिहिं ऊपर बांधि किनारि रसी है ।। श्री हरि देव की माधुरी मूरति, मो मन मांहिं जु ऐसी बसी है ।।

सवैया ९८

मौर किरीट छुटी जुलफैं, मुख चन्द अमी मुसकान महा है । गुञ्ज हरा, मखतूल छरा, बनमाल त्रिभंग व्है अंग रहा है । गोकुल गोरज

साँवरो रंग, रही पट पीत की पूरि प्रभा है। मोही सों राधा कहैं सजनी, न बिलोकत मोहि भई तू कहा है ॥

सवैया ९९

कटि पीतपटी फहरात मनोहर, औ लकुटी कर चारु लिये। सिर मोर पखा मुरली मुख बाजत, राजत है बनमाल हिये। "हरदेव" मनोज तरंगन सों, तन चंदन चित्र विचित्र दिये॥ यमुना तट श्री वृषभान सुता, विहरैं मन मोहन रूप किये।

सवैया १००

पीत पटीकटि में लकुटी, करि गुञ्ज की माल हिये दरसावैं। सौरभ मंजरि कानन में, शिख पच्छिन शीश किरीट बनावैं॥ दास कहा कहों कामरि ओढ़, अनेक विधानन भौंह नचावैं। कारे डरारे निहार इन्हें, सखि रोम उठैं अखियां भर आवैं॥

सवैया १०१

मौर किरीट कसे कटि काछनि, बांसुरी मंद बजावत ठाड़ो। आवत ही यमुना तट ते, वृषभान लली गहे गौरव गाढ़ो। 'गोकुल' हेर थकी थहराय गयो मन बूढ़ कढ़े सो न काढ़ो। सुस्वेद सनेह इतो सरस्यो, मनु प्रेम पयोनिधि आवत बाढ़ो॥

सवैया १०२

लटकी पगिया लपटी जुलफैं, सिर गौरज रेख सँवार दई। मकराकृत कुण्डल गोल कपोल हिये लटकी बनमाल नई। गहि डार कदम्ब की झूमत है, इन माइन 'बेनी' जो हौं चितई। जु बिसारे ते क्यों बिसरे निसरे, जिय ते वह मूरत मैंन मई॥

सवैया १०३

बरहा फहराय ज़री पगिया, गज मोतिन सों सिरपेच खँच्यौ है॥ कुंडल लोल कपोल महा छवि, श्री मुख माँहि तमोल रच्यौ है॥ हाथ छरी ले

गुलाव कली, गलियान में गावत रंग मँच्यौ है ॥ रेमन श्री हरि देव निहारि, वृथा जग फन्द में काहे पच्यौ है ॥

सवैया १०४

मंजु मयूर किरीट लसै, दुति अम्बर पीत अनूप निहारो ॥ त्यों जगदीश विशाल गरे, मणि माल मतंगन की छवि सारो ॥ कुन्डल गोल कपोल निहारि, निहाल भयो मन दास तिहारो ॥ लाल बिहारी कृपा करि सुंदर, मो उर मंदिर माँहिं सिधारो ॥

सवैया १०५

बरहा धर सीस खड़े हरि देव, तरैं करहा लकुटी छवि चारी ॥ फैंट धरैं मुरली बन माल विराजत पीत पटा झलकारी ॥ कुण्डल लोल कपोलन डोल, लटैं छिटकी कच घूंघरवारी ॥ रे मन हों त्रन तोरि के तोहि, करों हेरि देव के रूप पै वारी ॥

सवैया १०६

मोर क्रीट मनोहर कुण्डल, मञ्जु कपोलन पै अलकावली ॥ पीत पटी लपटी तन साँवरे, भाल पटीर की रेखि रसाली ॥ त्यों नँदराम जु बेनु बजा-बत, आज लखे बन में बन माली ॥ नैंन उघारिबे को मन होत न, मोहन रूप निहारि के आली ॥

सवैया १०७

सिर मोर पखा मुरली कर ले, हरि दैगयो भोरहि भाँवरी सी ॥ कहि "तोष" तिहीं जब ही ते चढ़ी, अङ्ग अंग अनंग कि दावरी सी ॥ नट साल सी साल रही न कढ़ै, चढ़ि आवत है तन तावरी सी ॥ अंखियाँ में समाय रही सजनी, वह मोहनी मूरति साँवरी सी ॥

सवैया १०८

रूप ज़री को झँगा उर सोहत, ताश की पीत पिछोरी करी है ॥ हीरन के सब भूषन अंग में, नीलम की उर माल खरी है ॥ पायन पैंजनी मानिक

की, उपमां कबि आनँद नैन भरी है ॥ श्री हरि देव के रूप समुद्र में, मानों त्रिवैनी की धार ढरी है ॥

सवैया १०९

रूप अनूप कदम्ब के कानन, कुञ्जन केलि कलोल कला को ॥ काम करोर की सूरत स्याम की, धीरज कौन कहा अबला को ॥ मोर किरीट गरे बन माल, बिसारि सकै सखि एक पला को ॥ मन्द हँसी मुख चन्द मनोहर, नन्द के नन्द गुविन्द लला को ॥

सवैया ११०

है हिय में टट की बनमाल सु, भाल पै बन्दनि बिंद नवीनो ॥ पीत पटी फहरावत सुन्दर, मौर किरीट झुक्यौ रँग भीनो ॥ वाही को रूप अनूप लखै, रति के पति को मद होत है हीनो ॥ सो व्रजराज मिल्यो री भटू, पर लाज निगोड़ी ने देखन दीनों ॥

सैवया १११

उलहे नँद नन्दन के तन में, छबि नील घटा घन की निदरैं ॥ बिलसैं मनि कुण्डल कानन में, मुख चन्द मयूष पियूष झरैं ॥ अबिलोकन को तरुनी ललकैं, पहिरे मुक्ताहल माल गरें ॥ पियरो पट मोर किरीट लसै, नट नागर मो मनते न टरैं ॥

सवैया ११२

पट पीत कसे नट भेष लसै, मुसकाय कैं नैंन नचावन की ॥ गर गुञ्जन माल बिशाल दिपै, कर में बर कंज फिरावन की ॥ मधुरी धुनि बैन बजावन गावन, बानि परी तरसावन की ॥ निशि द्यौस सदां मन माँहि बसैं, छबि वा बन ते बनि आवन की ॥

सवैया ध्यान गोबिंद ११३

लाल पगा खुले बंद झँगा बिच, पीरे रँगा झलकै कटि धोती ॥ 'बानी' कहै कलगी सिर पेच औ, घूंघरिया बने कानन मोती ॥ बेंदिन सों खुलि

टीको लसै, बजुवा पहुँची उर माल उगोती ॥ वारों गुविन्द की या छवि पै, नक मोती है मानों मनम्मथ मोती ॥

सवैया ११४

जूरा जराऊ जहूरा वन्यों, बर बेंदी है घूंघरियाँ रतनारी ॥ 'बानी' कहै मुख बैंन बजै, बनमाल झुकी पियरे पट भारी ॥ गोविंद कै मकरा कृत कुण्डल, कोरैं मिलीं अँखियाँ अनियारी ॥ रूप सरोवर चारी मनों, जुग मीनन मीनन सों करी यारी ॥

सवैया ११५

बाँसुरी कुण्डल मोर पखा, मधुरी मुसक्यान भरी मुख हैये ॥ "बैंनी" पितम्बर हार हरो, भरो रूप समुद्र को पार न पैये ॥ जाइ अजान लखै सो लखैं, हम जान के बाहि किती कँवरैंये ॥ बाद हि हेरि दियो मन मानिक, दै हें कहा फिर हेरि कन्हैये ॥

सवैया ॥ ११६ ॥

पीत पटी लकुटी बनमाल, सिखंड सिखा सुखधाम सुधारे ॥ खंजन से मन रञ्जन नैन हैं,ऐनन के मद भञ्जन वारे ॥ पूरन काम लला 'हरदेव' पै, कोटिन काम कलानिधि वारे ॥ देखेरी आवत जो बन ते, फिर मो मन ते न टरे छिन टारे ॥

सवैया ॥ ११७ ॥

मोर पखा कलगी सिरपेच, सो कुण्डल चारु कपोल लुभायो ॥ घूँघर वारी छुटी अलकैं, तिन ते कल कंठ कपोत लजायो ॥ केहरि सी कटि छीन लखे, त्रबली तर नाभि के कूप धसायो। ॥ श्री हरिदेव के रूप रम्यो मन, नीठि के पायन माँझ बसायो ॥

सवैया ॥ ११८ ॥

वह साँवरि सूरत माधुरि मूरत, मोहन की मन मोहन आजत ॥ सखि तापै त्रभंगी सुरंगी लसी फवि, बंसि धरे कर मार हि लाजत॥ मृदु मोर पखैं जु

लखैं उलझी लट, तापै चखैं कुरखैं अहि राजत ॥ टक एकहि साथहि "नाथ" लखी जनु, चित्र लिखी पुतरी छवि छाजत ॥

सवैया ११९

मोर पखान को शीश किरीट, हिये मुकतान को हार दुरारो ॥ खंजन के मद मोचन लोचन, श्याम सरोरहु सो तन कारो ॥ " श्रीपति " आनन रूप सुधाकर, नैन चकोरन लागत प्यारो ॥ आज भटू करी मोहि लटू, मुरलीधर गोकुल राज दुलारो ॥

पूर्वी भाषा का सवैया ॥ १२० ॥

घूँघची को हरवा पियरो पिछरवा, चंदन अंग लगाउता है ॥ मुरवा पंख पटुरवा लहकर, महकर मुकट बनाउता है ॥ नाक बुलाक कनौं बिच कुण्डल, छवि निरखत वह आउता है ॥ कबि लच्छ कहै जसुमत ढुटवा, मुहि मुर्ली शब्द सुनाउता है ॥

सबैया व्रजभाषा व फ़ारसी ॥१२१॥

साँझ समय घर ते निकरी, सब सखियन साथ वह साँवरी मूरत ॥ रम्ज़ो नाज़ नमूद सनम, बेताब शुदम अफ़ज़ूद कुदूरत ॥ मुसकाय के मो तन देखि दियो, तिरछी अँखियाँ चितवन कि मरोरत ॥ होशम रफ़्त, नमाँद बदस्त, शुदा दिल मस्त, ज़ि दीदने सूरत ॥

इति श्री १०८ ध्यान कवित्त माला सम्पूर्णम् ।

—०—

कवित्त जयपुरी भाषा ॥१२२॥

आजि घड़ी चारिकै सँवारै उठि आज्यो थे तो, जिहीं समय म्हे भी हाथ धोवता ही पावाँला ॥ पाछैं दन्त धावण करि अतर लगास्यां अंग, आछी भांति उम्दा पुसाक सरसावाँला ॥ चालस्यां आमैर ही में अम्बिका की झांकी

---

१ = हाव भाव सनम [प्यारे]ने ऐसे किये कि मैं व्याकुल हुवा, व रंज बढ़ गया ।
२ = मेरे होश जाते रहे, दिल हाथ में न रहा, मस्त होगया, सूरत देखते ही ।

करि, तुरत तियारी सब सीधी ही मँगाबाँला ॥ भंग कै चढायां रंग जीमस्यां उमंग ही सों, बीड़ी चाबि संग सरणाटा बन्द आबांला ॥

छप्पय उर्दू फारसी ॥१२३॥

नेक बख्त दिल पाक, दिलावर शेर मर्द नर ॥ अव्वल बलो खुदाय, दियो विसयार मुल्क ज़र ॥ तुम खालिक दरवेश, हुक्म मानें सब आलम ॥ दौलत वख्त बलन्द, जंग दुशमन पर ज़ालम ॥ ऐ शाह तुरा गोयद खलक़, कवि नरहरि ज़ुज़ई चुनीं ॥ अकबर बराबर बादशाह, मन दिगर न दीदम दर दुनीं ॥

[वीर रस]राजा महाराजाओं के कवित्त

कवित्त महाराजा मानसिंह जी [प्रथम] जयपुर [आमेर] नरेश—कवि विहारी [सतसई रचयिता] कृत ।

कवित्त ॥ १२४ ॥

महाराजा मानसिंह पूरब पठान मारे, श्रोणित के सरिता अजों न सिमटत हैं॥ सुकवि "विहारी" अज़ों उठत कबंध कूद, अजों लगि रण ते रणोई ना मिटत है ॥ अजों लों पिशाचन की चुहलन ते चोंकि चोंकि, शची मघवा की छतियाँ ते लिपटत है ॥ अजों लगि ओढ़े है कपाली आली आली खालें, अजों लगि काली मुख लाली ना मिटत है ॥

दक्षिन की विजय के पीछे लंका पर चढ़ाई का इरादा महाराजा मानसिंहजी करनेलगे तब एक कबिने यह सोरठा कहा।

सोरठा ॥

मान महीपति मान, दियो दान नहिं लीजिये।
रघुवर दीनो दान, विप्र बिभीषन जानकें ॥

महाराजा अभयसिंह जी जोधपुर नरेश ने,जब बीकानेर से युद्ध ठना, तब महाराजा जयसिंह जी जयपुर नरेश को लिखा था।

दोहा ॥

अभय ग्राह बीकान गज, मारू सिंधु अथाह ।
गरुड़ छांड़ि गोविन्द ज्यों, सहाय करो जयसाह ॥

एक बार जयपुर जोधपुर नरेश साथ २ थे तब जोधपुर के कवि ने अपने महाराज कीप्रशंशा में कहा—

दोहा ॥

व्रज देसां चन्दन बिड़ां, मेरु पहाड़ाँ मौर।
गरुड़ खगां, लंका गढ़ाँ, राजकुली राठौर॥

उसी समय जयपुर के कवि ने यह उत्तर देकर सब को प्रसन्न कर दिया।

दोहा ॥

व्रज मंडल' चन्दन रमन,नख पर गिरवर धार।
गरुड़ चढ़न, लंका दहन, रघुवंशी अवतार॥

फिर दोनों महाराजा गोविन्द देव जी के दर्शन को गये तब फिर जोधपुर के कवीश्वरजी ने तर्क करी।

॥ दोहा ॥

जन्म लियौ रघुवन्श में, क्यों की कृष्ण उपास।

उसी समय जैपुर के कवि ने क्या अच्छा उत्तर दिया।

जी के छाँड़े चालिजे, जी के बसि जे बास॥

३ मार्च सन १६६५ ई० को जिस वक्त महाराजा जयसिंह जी जैपुर नरेश शिवाजी मरहटा पर चढ़ाई करने लगे, तबकवीश्वर ने यह कवित्त सुनाया।

कवित्त ॥ १२५ ॥

आगे हू बिचारि देखि, सकल पुरान साखि, कहै कवि "थान" जैसी कीनी रघुनाथ है॥ सेत बाँधि बानर चढ़ाय गढ़ लंक पर, राचस पछारि मारि लीनों दस माँथ है॥ अब चढ़्यो मान को रखैया जगतेस बंस, सकल असीसैं जाहि जय जाके साथ है॥ 'सेवा' सुनि भाजियोरे, दौरि पाँय लागियोरे, दच्छिन की जीत रघुबन्सिन के हाथ है॥

महाराजा जयसिंह जी शिवाजी के यहाँ पहोंचे उस वक्त का।

कवित्त ॥ १२६ ॥

काशी काशमीर गुजरात भूमि कामरू की, काबुल को लूटि लई एक ही नगारे में॥ उनके बड़े रामचन्द्र सिंधु हू की पैज बाँधी, मान से महीप हद पाड़ी है हिमालै में॥ खीजे खोद बावैं, रीझे दारिद्र गमावैं यह, दोऊ शुभ

लच्चन आमेर गढ़ वारे में ॥ जननी की मान 'सेवा,' मिलि 'जयसिंह' सैं, पच-रँग फरकाय दैंगे शाह के सितारे में ॥

महाराजा जयसिंह जी ने ११ जून सन १६६५ ई० को शिवाजी मरहटा पर विजय प्राप्त की उस समय का।

कबित्त ॥ १२७ ॥

शाह फरमाने, भये जयसिंह चढ़ाने, देस पब्बै पसाने, खग्गों ख्यालन अघानैं के ॥ मचो घमसानें, तहां धीर को धरानैं, वीर, मोह न छुवानैं, तहां अगह कहानैं के ॥ "नरिंदन" बखानैं, दिन लागत भयानैं, उड़ै गरद भ्रास-मानैं, लैं जुटे पेश खानैं के ॥ हय नाखि दाने, चन्द आप भुज पानैं, छीन लायो शस्त्र बानै, सूजा शाह मरदानै के ॥

कवित्त दसैहरा सवाई जयसिंह जी जयपुर ॥ १२८ ॥

जोधपुर बीकानेर उदित उदयपुर के, कोटा बूंदी ऊंमट भदोरिया विचारे हैं ॥ बाघ के बघेला औ बुंदेला जैतपुर वारे, मांडल गढ़ के कर जोर के निहारे हैं ॥ भाटी खींची ओंड़छे नरेश नैपाल वारे, अवनि अनेक भूप आइ के जुहारे हैं ॥ द्यौस दस राहे की खबर दसराहें होत, राजा "जयसिंह" तोपैं राज सब वारे हैं ॥४॥

वीर कवित्त सवाई जयसिंह जी ॥ १२९ ॥

कूरम नृपति जयसिंह बाँह फरकैं, सो पार होत पल में सहत सूकी बरकै ॥ चालत सलूक चकुटी किये उर कर के, सो बकतर टोप करी काच जिमि कर कै ॥ " सूरज " भनत करैं घाव जाही धरकै, सो ताको हियो नेंक बेर दोय तीन धर कैं ॥ मालुम जगत में लगत जाके सर के, सो हाथी पैंड़ पाँच सात पीछे पाँव सरकै ॥

छप्पय महाराजा सवाई जयसिंह जी जयपुर नरेश ॥ १३०

नागन मणि है शेश, देश मणि कनवज जानहुं ॥ दिवस मणी है भानु; रैन मणि चन्द्र बखानहु ॥ तरवर मणि है कल्प, पुहुप मणि कँवल बिरज्जत ॥ असुरन मणि है शुक्र, सुरन मणि इन्द्र गरज्जत ॥ रानन मणि विकरम नरिंद,

राजन मणि है रामहू ।। बिशनेश नन्द महि पर बली, क्षत्रिन मणि जय-सिंह तू ।।६।।

कवित्त जयपुर नरेश सवाई जयसिंहजी ।। १३१ ।।

बीतत सिसिर ऋतु, सैसब बिकास लहैं, चारु सरसीरुह, बदन दरसाई है ।।सरस्यों सरस फूली, फूलि रही सौन जुही, जाकी यह अंग रुचि रुचिर सुहाई है ।। फूल्यौ गुल लाला, छाई छिति पै छबीली छवि, सूही सारी पहिरैं महाई मन भाई है ।। साहिब सवाई जयसिंह सुखदाई, बनि आज नव बाला ज्यों बसन्त ऋतु आई है ।। २ ।।

कवित्त दानबीर महाराज सवाई जयसिंहजी जैपुर ।। १३२ ।।

बकसि बितुन्ड दिये, झुन्डन के झुन्ड रिपु, मुन्डन की मालिका दई त्यों त्रिपुरारी को ।। कहै पदमाकर करोरन के कोश दिये, षोड़श हू दीने महादान अधिकारी को ।। ग्राम दिये धाम दिये उदक इनाम दिये, अन्न जल दीने अवनी के जीवधारी को ।। दाता जयसिंह दोय बात तौ न दीनी कहूँ, बैरिन को पीठ और दीठ पर नारी को ।। ३ ।।

बीर कवित्त सवाई जयसिंह जी जैपुर ।। १३३ ।।

दौरे काल किंकर कराल कर तारी देत, दौरी काली किलकत छुधा के तरंग ते ।। कहै हरिकेश दांत पीसत खबीस दौरे, दौरे मंडलीक गीध गीदर उमंग ते ।। वीर जयसिंह जंग ज़ालिम सु कौन पर फरकाई भुज औ चढ़ाई भौंह भंग ते ।। भाँग डार मुख ते भुजान ते भुजंग डार, हर्ष ईश दौर्यो डारि गौरी अरधंग ते ।। ४ ।।

एक जयपुर के कवीश्वर जी को सेठ समझ कर एक मनुष्य ने हुँडी कर देने के लिये बहुत हठ किया तब यह कवित्त, महाराजा रामसिंह जी (प्रथम) जयपुर नरेश कोहुंडी के रूपक में लिखकर भेजा ।

कवित्त ।। १३४ ।।

सिद्धि श्री रामसिंह कीरति बिदति भई तीं लोक रो राज ज्यों लौं ध्रुव तिरबैनी है।। रावरी कुशल हम सखन समेत चाहैं,घड़ी घड़ी पल पल यहै सुख चैनी है ।। हुँडी एक तुम पै कीनी है हजार की सो कबिन को राखो मान, धर्म

जोग्य देनी है ॥ पहुँचे परमान मान बंस के सपूत भान, रोक गिन देनी जस लेखै लिख लेनी है ॥

इस कवित्त के पोंहचते ही महाराज ने हुंडी के रुपये देकर यह दोहा लिख भेजा।

दोहा

इतमें हम महाराज हैं, उतैं आप कवि राज।
हुंडी करत हज़ार की, तुम्हैं न आई लाज ॥

छप्पय महाराजा माधवसिंह जी [प्रथम] जयपुर नरेश ॥१३५॥

दल मल अरि दल बिकल, सकल सठ भजे देस तजि ॥ मार तंड ज्यों चंड, उदित भू मण्ड छटा छजि ॥ कम्पति दिग दिगपाल, शेश सिर झम्पति लखि दल ॥ संग सुभट्टन भट्ट २ संघट्ट महाबल ॥ समरत्थ पत्थ जस रत्थ में, खल खण्डन मंडन बखत ॥ राजा धिराज महाराज नृप, माधवेश जयपुर तखत ॥

महाराजा माधव सिंह जी (प्रथम) जयपुर नरेश की विजय महाराजा जवाहर-मल जी भरतपुर नरेश पर सन् १७६८ ई० की लड़ाई मुकाम मावँडा निजामत तौरा वाटी में हुई उस समय का कवित्त।

कवित्त ॥ १३६ ॥

जो लों देस डब्बा में रह्यौ तौलों किम्मत ही, कैसे परे जान्यों अन तोल्यौ ही अनूठो थो ॥ कहै 'शिवराम' ज्यो फिरंगी कढ़्यौ लीनो साथ, कीनों सिर पेच मारवाड़ी मति भोंठो थो ॥ आयो लै दिखावन महाराज कूरम कूं, खोयो निज भरम न जान्यों प्रभु रूठो थो ॥ माधवेश जौहरी की नज़र न आयो तब, जाहिर जहान भौ जवाहरियो झूंठो थो ॥

कवित्त महाराजा प्रतापसिंह जी जैपुर नरेश ॥१३७॥

अरि कुल कंस ताके नासबे को व्रज चन्द, वियोगी कुमति को मिटावन गनेश हैं ॥ दारिद्दर रावन जिन खोयबे को रामचन्द्र, बिपति कलुप ताको हरन महेश है ॥ दूषन के चिकत्ता के मारन को भीम है रु, खलन तिमर दूर करन दिनेश है ॥ कहत नँदलाल आज माधव महीप नन्द, राजै जग ऊपर प्रताप सो नरेश है ॥

कवित्त महाराजा जगतसिंह जी जयपुर नरेश ॥१३८॥

प्रबल प्रताप कुल दीपक छता के पुन्य, पालक पिता के राम राजा ज्यों भगत राज ॥ कान्ह अवतार बैरी बारिधि मथन काज शील के जहाज़ बल बिक्रम तखत राज ॥ म्लेच्छ अंधकार मेटवे के मारतण्ड दिन दूल्है दुनी के हिंदवान के नखत राज ॥ पारथ से प्रथु से परीच्छित पुरंदर से, यादों से ययाति से जनक से जगत राज ॥

कबित महाराजा जगतसिंह जी जयपुर ॥ १३९ ॥

छत्रिन के छत्र छत्र धारिन के छत्र पति, छाजत छटान छिति छेम के छवैया हो ॥ कहै पद्माकर प्रभाव के प्रभाकर दया के दरियाव हद हिन्दु के रखैया हो ॥ जागते जगत सिंह साहिब सवाई श्री, प्रताप नृप नन्द कुल चंद रघुरैया हो ॥ आछे रहो राज राज राजन के महाराज, कच्छ कुल कलश हमारे तो कन्हैया हो ॥

महाराज जगतसिंह जी जयपुर नरेश व जोधपुर नरेश मानसिंह जी, उदय पुर सैना लेकर ब्याह करने गये उस समय मुकाम गंगोली सन् १८०३ ई० में लड़ाई हुई और जैपुर नरेश की बिजय हुई। इस समय का

सवैया ॥१४०॥

ब्याह उदय पुर को करिहौं, धरके जिये माँझ यही गल गाज्यो ॥ घेर लियो जगतेश जबै, तब सोच सँकोचन को तज लाज्यो ॥ याद कियो पुर खान को पौरष, सो रस में छकि या बिधि साज्यो ॥ आयो हो मान बना बन बे को, बनी बन आप बनी बन भाज्यो ॥

जयपुर नरेश महाराजा रामसिंह जी[द्वितीय]का कबित्त ॥१४१॥

परम प्रभान मेरु भान से जहान बीच, मान महाराज से कृपाण बिकरार हो ॥ बड़े जय शाह से पनाह दोऊ दीनन के, राम अभिराम ज्ञान गुन के अगार हो ॥ धरम धुरंधर सबाई जयसिंह सम, इन्द्र माधवेश सम भाग्य के भँडार हो ॥ प्रताप में प्रताप से सवाई राजा राम तुम, ज़ाहिर जगत जगतेश से उदार हो ॥

कवित्त महाराजा रामसिंह जी (द्वितीय) जयपुर नरेश ॥१४२॥

कुम कुम बैंदा उत इत को अनिल द्रग, उतै बर माँग इतै गंगा बर भेष की ॥ उतै मुक्त माला इतै शोभित भुजंग माला, उतै अङ्ग राग इतै भस्म इल बेस की ॥ बसन उतै कोगज खाल को खुलत इतै, उतै शैल शोभा इतै प्रभा ज्यों दिनेश की ॥ भूप मणि राम सिंह रावरे बसहु उर, गवरी सहित मंजु मूरति महेश की ॥

सवैया महाराज माधवसिंह जी [द्वितीय] जयपुर नरेश ॥१४३॥

चन्द्रक चारु मयूरन की सिर, औ बनमाल की है छबि न्यारी ॥ साँवरे गात लसै पट पीत, अरु मंजुल मन्द हँसी रुचि कारी ॥ तैसि लसै मुख की सुखमां, मुरली ब्रज नारिन के चित हारी ॥ या छबि सों हैं सहाय सदां, नित माधब भूप पैं कुञ्ज बिहारी ॥

सवैया [द्वितीय] महाराज माधवसिंह जी जयपुर नरेश ॥१४४॥

मन्जुल मोर को मुक्ट लसै सिर, शोभ लिये अति सुन्दर भाल की ॥ बन्सी बिराज रही अधरान पै, कंठ पैं त्यों छवि मोतिन माल की ॥ भूषन अङ्ग अनेक सजे, लखि ह्वै मति पङ्गु कविंद बिशाल की ॥ माधब भूप के सीस बसो यह, माधुरि मूरति लाल गुपाल की ॥

सवैया महाराजा माधव सिंह जी [द्वितीय] जयपुर नरेश ॥१४५॥

सारद नारद पारद शेश शिवाद्रिय सागर छीर सुधाई ॥ कांस कमोद कपूर कपास करिंदन दंतन सों फबिताई ॥ चांदनी सर्द ससी शिशु हंस श्रुद्रुम सङ्ख हू सों सुघराई ॥ कीरति माधव की इनते, निशि बासर ओपति ओप सवाई ॥

कवित्त महाराज माधव सिंह जी [दूसरे] जयपुर नरेश॥१४६॥

देवन में ईश जिमि, अहिन अहीश जिमि, पौन पूत कीश जिमि, तारन निशीश हैं ॥ गृहनि दिनेश जिमि, यक्षनि धनेश जिमि, गणनि गनेश जिमि, मेरु ज्यों गिरीश हैं ॥ साखिन में काम तरु, नामन में राम जिमि,

वेदन में साम जिमि, अंगन में शीश हैं ॥ भनत कविन्द तिमि छोनि के छितीशन में, वीर धीर जैपुरेश माधव छितीश हैं।

कवित्त श्री महाराजामान सिंह जी मौजूदा जैपुर नरेश ॥१४७॥

दीसत न और बाग जैसो रामबाग जहाँ, रहत सदाँ ही षट ऋतु कोसमाज है॥ नाहिन कटोरा ताल जैसो और ताल, मान सर ते सरस, धरै उपमां को साज है॥ मणि जम्बू दीप की बनायो जयसिंह भूप, जयपुर नगर अवनी को सिर ताज है॥ जयपुर की तीज सी न तीज और ठौर कहूं, मानसिंह सो न और दूजो महाराज है।

कवित्त बूँदी नरेश ॥ १४८ ॥

शोभा में निशा कर सो, तेज में दिवाकर सो, दान में उमावर सो, कीरत को धाम है॥ रूप में मनोज सो, अलप्त में सरोज सोहे भोज काव्य मौज माँहि चोज ही सों काम हैं॥ सुकवि गुलाब कहैं ग्यान में जनक सोहै बनक शरीर को सुरेश सो तमाम है॥ वैरिन में विप्रराम, नीति मांहि जदुराम, बूंदीनाथ राजाराम शील मांहि राम है।

बीर कवित्त बूँदी नरेश ॥ १४९ ॥

हूल परी हुरम हिये में यह बात सुनि, चौंकि परी सारी पात शाई के वा समें॥ खान सुलतान सब दाँतन तिनूका लिये, आँतन बखेरि मीर मार्‌यो एक जा समें॥ भोज रतनेश से सवाई कीनी हाड़ा राव, बुद्धि बलवान विभ्र-ताई के प्रकाश में॥ अप छुरी अकाश मै, तमाशे अई ता समें, निकासी बाय जा समें, कटारी आम खास में॥

कवित करौली नरेश ॥१५०॥

गोत को गुवाल तुहा, दूसरो गुपाल तुही, जादों कुल पाल तुही, वैरिन को काल है॥ धर्म धुर पाल तुही, सोहै धुर पाल तुही, आदि नर पाल तुही, शत्रु उर साल है॥ घने घर घाल तुही, शाहन की ढाल तुही, छत्र पाल पाट तुही, नवो द्रगपाल है॥ कृष्ण कुल लाज तुही, विनै जग पाल तुही, देवोदास ऐसो महाराज धर्म पाल है॥

कवित्त शिवाजी महाराज का ॥१५१॥

कूरम कमल कमद्धु ज हैं कदम फूल, गौड़ हैं गुलाब राना केतकी बिराज है ॥
पाड़र पँवार जुही सोहत हैं चन्द्रावत, सरस बुँदेला ज्यों चमेली सजपाज है ॥
तातो मरकटी मुचकुन्द बड़ गूजर हैं, बघेला बसंत सब कुसुम समाज है ॥
सब ही को रस ले के बैठन सकत जापै, अलि अवरंगजेब चम्पो शिवराज है ॥

कवित्त ॥ १५२ ॥

झुकत कृपान मय दान ज्यों उदोत भानु, एकन ते एक मानों सुखमा जरद की ॥ कहै कवि "गंग" तेरे बल के बयार लागे फूटी गज घन्टा घन घटा ज्यों शरद की ॥ ये ते मान श्रोणित की नदियां उमड़ि चली, रह्यौ ना निशान रणभूमि औ गरद की ॥ गौरि गह्यो गणपति, गणपति गह्यो गौरि, गौरीपति गही पूंछि लपकि बरद की ॥

कवित्त ॥१५३॥

"मान" दस लाख दिये दोहा हरिनाथ के पै, लाख हरिनाथ दै कलंक कबि ऐ है को ॥ "बीरवल" दै छे कोटि केशव कवित्त पर, सेवा हाथी बावन दिये भूषन ज्यों पै है को ॥ छप्पय पै सत्ताईस लाख गंग "खानखाना" दिये, यहिं विध सु दूनो दान दिन दिन दै है को ॥ राजा हरिचंद छन्द खूब चंद के पै खूब, बिदा में दगा दई दई न काहू दै है को ॥

अब ऊपर के कवित्तो की कपिता वड़ी खोज और महनत से तलाश कर कर के लिखते हैं—प्रथम[१] जो हरिनाथ कवि को महाराजा मानसिंह जी आमेर जैपुर नरेश ने १०००००० रुपया इनाम बखशा वह यह दोहा है—

दोहा ॥

नहिं पराग नहिं चन्द में, नहिं तिय अधरन ओर ॥
अमी बसत नृप मान अरि, कर अँगुरिन की छोर ॥

इस दोहामें कविने जो अमृत ३ठौर बतलाया जाताहै, वह महाराजा मानसिंहजी के दुश्मनों के हाथ की उँगलियों में बतलाया है—इस पर महाराजा साहब ने कहा कि यह तो हमारे दुशमनों की प्रसंसा हुई—इस पर कवि ने कहा कि नहिं हजूर जब वह [अरि] दोनों हाथों की उँगलियाँ सीधी करके सामने आजाता है तो उसकी जान बच जाती है जो अमरत का काम है-इस पर बहुत प्रसन्नहोकर दस लाख रुपयादिया वह रुपया हाथी

पर रख कर हरिनाथ कवि सब को बांटता आता था कि रास्ते में कलंक कवि ने रुपया बांटता देख कर यह दोहा सुनाया ।

दोहा १५५ ॥

भीख माँगि दोऊ बढ़े, कै हरि कै हरिनाथ ॥
उन बढ़ि ऊंचो पग कियो, तैं बढ़ि ऊंचो हाथ ॥

इस दोहे पर कलंक कवि को १००००० रुपया हरिनाथ कविने उस १०लाख में से खुश हो कर दे दिया । जो मानसिंहजी से मिले थे ।

राजा बीरबलने केशबदास जी कवि को,जो [सूर सूर तुलसी शशी,उड़गण केशव दास । अब के कवि खद्योत सम, जहँ तहँ करत प्रकाश ॥] में से हैं ६००००००० रुपया इनाम दिया वह यह सवैया है ।

सवैया १५६

भू रवि पंछि पशू नर नाग, नदी नद लोक रचे दिश चारी ॥
"केशव" देव अदेव रचे, नरदेव रचे रचनार निहारी ॥
सुनिये नृप नाथ बली बल तोय,सु दै कर कृत्य भयो ब्रतधारी ॥
दै करतार अपनो सब तोय, दई करतार दोऊ कर तारी ॥

इस नीचे के कवित्त के लिये सुना है कि, भूषन कवि जब मथुरा से भाभी के ताने मारने पर कई दिन देवी के मठ पर निराहार पड़ा रहा, तब देवी ने साक्षात दर्शन देकर उसकी जिह्वा पर सरस्वती मंत्र लिख दिया, जिससे वह बड़ा कवि होगया, फिर वह औरंगजेब के दरबार में पहुँचा, वहां उसने बादशाह से कहा कि मेरे कवित्त सुनने हों तो पहले हाथ धो डालो, क्यों कि मेरे भाई मतिराम के रस कवित्त सुन कर धोती पर हाथ जाता है, मेरे बीर कवित्त सुन कर मूछों पर हाथ पड़ेगा,इसपर दरबार से निकाला गया, और महाराजा "शिवाजी" मरहटा के शिकारगाह पर पहुँचा, और यह कवित्त सुना कर जितने ५२ हाथी वहां मौजूद थे इनाम पाये ।

कवित ॥१५७

इन्द्र जिमि जम्भ पर बाडव सु अम्भ पर, रावण सुदम्भ पर,रघुकुल राज है॥ पौन बारि बाह पर, शिम्भु रतिनाह पर,ज्यों सहस्रबाहु पर,राम द्विजराज हैं ॥ दावा द्रुम दंड पर, चीता मृग झुन्ड पर, भूषन बितुंड पर, जैसे मृग-राज हैं ॥ तेज तम अंस पर,कान्ह जिम कंस पर, त्यों म्लेच्छ बंस पर, शेर शिबराज है ॥

एक बार शाम के वक्त गङ्ग कवि जो खानखाना उपनाम "रहीम" के यहां पहोंचे तो वह सैर को जारहा था और घोड़े का तंग ढीला देख कर क्रोध करके अपने हाथ से तङ्ग खैंचरहा था उस वक्त फौरन यह छप्पय सुनाई, जिसको सुन कर खानखान ने कहा क्यों इतनी झूठ ग़लत बात गङ्ग जी कहते हो, गङ्ग ने कहा कि देखिये शाम के वक्त यह सब बातें मिलती है—भोंरा कमल में बन्द होकर भ्रमता रहगया, सर्प मणि को रखकर ईश्वर आराधना कर रहे हैं, पवन मन्द चल रहीं है,शाम को चकवा चकई का बियोग है, इसी तरह सारी बातें मिला लीजिये, यह सुन कर खानखाना बड़ा खुश हुआ, और २७००००० रुपया जो खज़ाने में मौजूद था गङ्गकवि को इनाममें देदिया वह यह छप्पयहै-

छप्पय ॥१५८॥

भँवर भ्रमत रह गइउ, गवन नहिं करत कमल तन ॥ अहि फणि मणि नहिं लेत, पवन नहिं चलत तेज घन ॥ हंस मानसर बर थक, चक चक्रवीन मिलंत पति ॥ अहो मद्मनी नारि पुरुष रक्खै न करत रति कलमल शेष कवि "गंग" भनि, सुनत रोर रवि रथ थक्यो ॥ ख़ानाख़ान बहरम सुतन तदन क्रोध कर तँग करयो ॥

प्रसिद्ध चीजों के कबित सवैया

छप्पय ॥ १५९ ॥

जब गिरिधर "श्रीनाथ" जैति "नवनीत"लाल प्रिय ॥ जैति "द्वारिका धीश" जैति "मथुरेश" माल हिय ॥ जै जै "गोकुल नाथ" "मदनमोहन" पिय प्यारे ॥ जै "गोकुल चन्द्रमा" सु "बिट्ठल नाथ" दुलारे ॥ श्री बालकृष्ण नटवर नवल, श्री मुकुन्द दुख द्वन्द हर ॥ ललित त्रिभंग स्वामिनि सहित, गोपाल लाल जै जयति हर ॥

कवित्त श्री बृन्दावन धाम के मुख्य दरशन ॥ १६० ॥

गोपीनाथ करिहैं सनाथ प्यारे गोविन्दजू, जुगल किशोर चित चोर. उर धरिये ॥ श्रीमदनमोहनजू बाँकुड़े विहारी प्यारी,छवि उजियारी ताहि चित्त ते न टरिये ॥ लाल बलवीर राधाबल्लभ निकुंज हेर, राधिका रमन जू को मोद उर धरिये ॥ दीजिये प्रदच्छनां हिये में भाव राखि सदां, बृन्दाबन बीथिन सदैव वास करिये ॥

कवित्त (बृज मंडल के मुख्य २ परशाद की जगह)

दाऊजी को माखन औ मिसरी अनौखी खीर, गोकुल की लोटी सोसवाद

बिंदवाने की ॥ चन्द्रमा की चन्द्रकला चहूं ओर जाहिर है, दही औ बताशा वृन्दादेवी मन माने की ॥ मथुरा के पेड़ा बर टेंटी बृज मंडल की, गोवरधन अन्नकूट शोभा सरसाने की ॥ दूध औ महेरी हेरी प्यारे नन्दग्राम ही की अतिशय सुगंधी नीकी बीरी बरसाने की ॥

सप्त चिरंजीव छन्द ॥ १६२ ॥

परशुराम चिरजीव आदि ईश्वर औतारा ॥ वेद व्यास चिरजीव वेद बानी बिस्तारा ॥ हनूमान चिरजीव सदां हरि आज्ञा कारी ॥ विभिच्छन चिरजीव राम चरनन अनुसारी ॥ बलिराजा चिरजीव विष्णु हरि हृदय बिराजे ॥ द्रोन पुत्र चिरजीव चिरँजी कृपाचार्य जे ॥ तत वेता तिहुंलोक में, सप्त चिरंजी ए कहे ॥ काल कर्म का को लगैं जे जन पिउ सों मिल रहे ॥

व्रज में कार्तिक उत्सव कवित्त ॥ १६३ ॥

राधा कुण्ड न्हान दीप दान गिरिराज बड़ी लहुरी दिवारी तामें सुख रितु छहूं को ॥ अन्न कूट गोरधन जम दुतिया अशनान भैया दोज गोकुल प्रदच्छना दै दुहूं को ॥ गऊ गोप आठैं अखै नोमी की प्रदच्छना दै, लीजे हरि लीलन को सुख छाँड़ि उहूं को ॥ देवन जगाय पच भीषन अन्हाय, याते जइये ना गोपाल कंत कातिक में कुहूं को ॥

कवित्त (देवी जी के मुख्य २ असथान) ॥ १६४ ॥

पच्छिम पहार बिच जागै जोति ज्वाला मुखी, हेमगिरि हिंगलाज गाजै पाप नाशिनी ॥ दच्छिन दिशा देबि तूलजा त्रिशूल लीने, काशमीर सारदा सुबुद्ध की प्रकाशनी ॥ कामरू कमख्या देवी भूमि भूमि रच्छा करै, धवला गिरि मात् देवी सच्च की निवाजनी ॥ आगरे अनन्दी बन्दी दासन दयाल होत, बिंद के पहार पर बिराजै बिंद बासिनी ॥

सवैया जोतिश ॥ १६५ ॥

आदित्य को जनमैं जननी सुत, चंचल होय महा अधिकारी ॥ सोम जनैं अति शील को सागर, मंगल को अति रूप निहारी ॥ है बुध को बुधमान धनी, गुरु को गुन को जग को हित कारी ॥ है भृगु बार को चोरी करै, शनि बार को है सुत जन्म दुखारी ॥

सवैया दशाशूल ॥ १६६ ॥

पूरब को नहिं कीजे गमन, सो सोम शनीचर मावस परिवारे ॥ मंगल-बार बुध वरजौं, दुतिया दसमी तिथि उत्तर डारे ॥ पच्छिम को छट चौदस शुकर, रबि वार चलैं वे होंहिं अनारे ॥ पंचमीं तेरस हैं गुरु ऊपर, दक्षिण जाहु न वेद बिचारे ॥

सवैया चंद्रमा देखने का ॥ १६७ ॥

कातिक ते गिन बूझ के माँस लों, दूने करै तिन में इक आनै ॥ बीति गई तिथि जो मिलवै, सब जोर के अश्वनी ते क्रम ठानैं ॥ जाँ लगि होय नक्षत्रहि जो, पुनि बाक़ी रहै फिर कै सो बखानैं ॥ पतरा के बिना ही प्रबीन कहै, या बिचार ते चन्द्रमां को पहिचानैं ॥

कवित्त ज्योतिष ॥ १६८ ॥

जन्म नक्षत्र में परै तो हरैं धन,जन्म रास पै परै तो होय घातक धन को॥ दूजे क्षय पावै तीजे लक्ष्मी गँवावै,चौथे रोग तन छावै, पाँचैं चिन्ता के चहन को ॥ छटे सुख सातवें कलित्र कष्ट आठैं मृत्यु, नवैं मान नाश दसैं सुख के लहन को ॥ ग्यारहवें में लाभ बारवें में है उपाय, ऐसो कह्यो फलाफल ससि सूर्य्य के ग्रहन को ॥

कवित्त अच्छे शिगून ॥ १६९ ॥

भाग की निकाई देखो चलत सुदामां जू को, आगे मिले मंजुल गयंद गति चाहिने ॥ शीश पै कलश धरे नागरी सु नीर भरे, लिये गोद ललना सो सगुन सुहावने ॥ ठौर ठौर बोलैं शुभ खंजन फुनिंद पर, सल फल कांधे धरे हरैं हर बाहनै ॥ मीन दधि सन्मुख पंडित तिलक दिये,जोरैं जुत कलराम आये मृग दाहिने ॥

कवित्त शिगून ॥ १७० ॥

द्विज दिये तिलक औ पोथी युत मिलैं दोय, होय जो शगुन शुभ कारज ही होय है ॥ श्याम चिरी सफल वृक्ष पर बांई होय, श्वेत चिरी दाहिनी सफल तरु जोय है ॥ दाहिने जो मिलै नाग भरे खेत बोलैं काग, छाक लिये

हारीन की मिलै मग जोय है ॥ खर मिलै बांयों जो प्रवेश होत ग्राम मध्य, सिद्ध होय काम चम्पाराम मन गोय है ॥

कवित्त शिगून ॥ १७१ ॥

सगुन को सार देखौ दाहिनों करुंज दारु, दाहिनो मयूर चारु, दरस दिखायो है ॥ दाहिनो ही जम्बुक उलूक स्वान दाहिनो ही, दाहिंनो ही लाल शुभ सगुन जनायो है ॥ दाहिनी चिरैया स्वेत शूकर खर दाहिनो ही, उज्जल बसन लिये रजक जो धायो है ॥ अन्न, पकवान, दूब, मृतका, सुगंध पान, फूलन की माल को समूह जिहां आयो है ॥

कवित्त मशहूर २ मेले ॥ १७२ ॥

मेला होत गनगोर उदयपुर नाथ द्वारा, अवध अयोध्या राम नौमी वह ठाम है ॥ कहै रस सिंधु भर मकर प्रयाग न्हाय, चरख बंगाले बीच करैं खुले आम हैं ॥ काशी औ राम नगर राम लीला देखो जाय, कजरी मिरज़ापुर देवी को जु धाम है ॥ दक्षिन श्री रंग कंचीबाला जी जु नाम भारी, जगन्नाथ पुरी मांझ रथ सरनाम है ॥

कवित्त ॥ १७३ ॥

मेला होत भारी खूब बम्बई दिवाली चारु, म्होर्रम हैदराबाद लखनऊ ठाम है ॥ कहै रस सिंधु कोटा जैपुर दसेहरा नामी, मथुरा में कंस लीला बूंदी तीज आम है ॥ पूजा करैं काली की जो पेखो कलकत्ते मांझ, आगरा पैराकी रथ बृन्दाबन धाम है ॥ भरत मिलाप काशी मंगल बुढ़ैवा सब, हरी क्षेत्र पिंड पुर देखो सिर नाम है ॥

कवित्त ॥ १७४ ॥

पूरब देश में पंडित उद्योत हैं, दक्षिन देश में धन्न घनेरो ॥ उत्तर देश में योग अभ्यास ते, ग्यान बढ़ाय कियो श्रम नेरो ॥ मरुधर देश में रूप स्वरूप है, गुर्जर देश में पुन्न घनेरो ॥ सुन्दर शहर बस्यो यक जयपुर, बाकी रह्यो सो बस्यो झुंड बेरो ॥

कवित्त ॥ १७५ ॥

दच्छिन की गनिका के गिने जात गाढ़े कुच, गरुवे नितम्ब बानि राखैं तान गान की ॥ बंगाली बरंगना के केश भले बेश होत, नैन हू बिशाल बान बने पान खान की ॥ जयपुर की बेश्या भलो भेष रचि जानैं दच्छ, बरनी हैं बानी कांई कांई के बखान की ॥ बार बधू ब्रज की त्यों देखियत बानी यह, मुरि मुसकान की कका की सोंह खान की ॥

कवित्त ज़ात ॥ १७६ ॥

बनिज काज बनियां, सिपाह को पठान अरु, जीमबे को बामन, विचित्र गुन गायो है ॥ खोजा दरबान, जन नाऊ सो न दूजो और, चोरी को सुनार देस देसन में गायो है ॥ राज रजपूत, मौज मांगबे को भाटकवि, जस लेबो देबो सब ही के बाट आयो है ॥ छोटी बड़ी साहिबी, हिसाब बाब मंगन के, सोच करतार कर, कायथ बनायो है ॥

कवित्त षट शास्त्र ॥ १७७ ॥

मी मांसा शास्त्र के करता जयमनि ऋषी, बैशेशिक शास्त्र के कणाद ऋषी मानिये ॥ न्याय शास्त्र के कर्ता कहिये गौतम ऋषी, पातंजल शास्त्र के शेश जी प्रमानिये ॥ सांख्य शास्त्र के करता कहिये कपिल मुनि, वेदांत शास्त्र के व्यास जी बखानिये ॥ षट शास्त्र के सब करता एकहे सुनाय, कहै बालकराम गुरू प्रताप ते जानिये ॥

छप्पय अष्ट मद ॥ १७८ ॥

प्रथम जात मद कहत, दुतिय मद है माया को ॥ तिरतिय कुल मद होय, चतुर्थै बल काया को ॥ पंचम बिद्या मदहि, षष्टमों तप मद भारी ॥ प्रभुता मद सप्तमों, अष्टमों रूप बिकारी ॥ जिहां एक एक मंद होय सो, बालक जन गरब्यो फिरै ॥ अरु मद आठौं हुई जासु के, सो भव जल कैसे तिरै ॥

अष्ट पदी (वृन्दाबन धाम के मुख्य २) दर्शन ॥ १७९ ॥

प्रथम दरश गोबिन्द, रूप के प्राण पियारे ॥ दूजें मोहन मदन, सनातन

शुचि उर धारे ।। तीजें गोपीनाथ, मधू हँसि कंठ लगाये ।। चौथे राधा रमण, भट्ट गोपाल लड़ाये ।। पाँचैं हित हरि बंस, सुबल्लभ राधा ।। छठयें युगल किशोर, व्यास सुख दियो अगाधा ।। सातैं श्री हरि दास के, कुञ्ज बिहारी हैं तहाँ ।। भगवत रसिक अनन्य मिलि, वास करहु निधि बन जहाँ ।।

छप्पय ।। १८० ।।

प्रथम सुनै भागौत, भक्त मुख भगवत बानी ।। द्वितिय अराधै भक्ति व्यास नव भांति बखानी ।। तृतिय करै गुरु समझि, दत्त सर्वज्ञ रसीलो ।। चौथे होय बिरक्त, बसे बन राज यशीलो ।। पाँचैं भूलै देह सुधि, छठें भावनाँ रास की ।। सातैं पावै रीति रस, श्री स्वामी हरिदास की ।

छप्पय ।। १८१ ।।

कुञ्जन ते उठि प्रात गात यमुना में धोवैं ।। निधिवन करि दंडौत, बिहारी को मुख जोवै ।। करै भावना बैठि स्वच्छ थल, रहित उपाधा ।। घर २ लेइ प्रसाद, लगैं तब भोजन स्वाधा ।। संग करे भगवत रसिक, कर करुवा गूदरि गरैं ।। वृन्दावन बिहरत फिरैं, युगल रूप नैंनन भरे ।।

छप्पय ।। १८२ ।।

जहँ रस स्वादी मिलैं, तहाँ सन्मान न होई ।। जहाँ होय सन्मान, तहाँ मन मिले न कोई ।। मन मिलाप तहँ होय, जहाँ इष्टता न पावै ।। जहाँ इष्टता मिले, तहाँ दारिद्र सतावै ।। जेतिक हरि के धाम तहँ, काम क्रोध क्रीड़ा करैं ।। भगवत यह कलि काल में, कहो रसिक कहँ निस्तरैं ।।

अपलक्षन छोड़ने योग्य छप्पय ।। १८२ ।।

उभय संधि में शयन, सहज रेखा बहु मंडै ।। दसन बसन बहु मलिन, मूढ़ ले लेखन खंडै ।। खात हस्त नख छदत नग्न रजनी मध्य सोवै ।। अंग बजावत मुदित, मलिन पग कबहुँन धोवै ।। दोऊ हाथ फेरि पीछे चलै, सदा रोम रूखे रहै ।। यह अपलच्छन जासु में, कहो लच्छ थिर क्यों रहै ।।

छप्पय मड़ौवा ।। १८४ ।।

सौ कुटिलन सम कुटिल, नैंन में फूलो जाके ।। सहस कुटिल सम कुटिल

एक हो नेत्तर ताके ।। लाख कुटिल सम कुटिल, गिनों जो ऐंचा तानो ।। कोटि कुटिल सम कुटिल, मांजरो जग में जानो ।। अरु मांजर ते दस गुन कुटिल काँजर नीके ठानिये ।। कहि चम्पा सबही ते अधिक, गन्जो पुरुष पिछानिये ।।

चिट्ठी पत्री के कवित्त सवैया ।। १८५ ।।

जान प्रवीन सुजान शिरोमनि, जम्पत हूं कबहूं न बिसारो ।। दासको दास सुद्रष्टि की आस, खरो कर प्रेम जो येह बिचारो ।। ऐसो तो भाग हमारो कहां, सुपने ही मया कर राज पधारो ।। नैनन को मिलबो तो रह्यो, पर काग़ज़ को मिलिबो मत टारो ।।

सवैया ।। १८६

जो जिय में तुम्हरे ये घात, तो आदि ही हाथ गह्यो क्यों हमारो ।। प्रीतम प्रान रहे तुम सों लगि, नीर ते मीन जिवे किमि न्यारो ।। बीछुरबो मिलिबो बस ईश के, मित्रन के मन एक बिचारो ।। नैनन को मिलबो तो रह्यो, पर कागद को मिलबो मत टारो ।।

सवैया ।। १८७ ।।

जा दिन ते तुम त्याग गये, हमरे मन में टुक नाहिं क़रारो ।। आस रही घट सास रही, यहि ते हमरे जिये नैंक सहारो ।। प्रीतम पै कर के किरपा, सिर पै पग धारत राज पधारो ।। नैनन को मिलवो तो रह्यो, पर काग़ज़ को मिलवो मत टारो ।।

सवैया सिंहा बिलोकन ।। १८८ ।।

टारो दिये अब कैसे बने, प्रिय नीकै कै नेह की ओर निहारो ।। हारो मती हम सौं तुम बोल, कृपा कर क़ौल को नाहिं बिसारो ।। सारो कहा कछू जोर चलै नहिं, कासैं कहैं अति ही दुख भारो ।। भारो लगै कछु नैन मिलाप में, कागद को मिलवो मत टारो ।।

सवैया सिंहाविलोकन ।।१८९।।

पतियांन बिधान किते पठवा, पथवान जुमान बढ़े रतियां ।। रतियां दिन ध्यान धरे ही रहैं, सहिये बिधि अंकन की गतियां ।। गतियां वह जानन

कौन हहा, जिनके नहिं छेद भयो छतियां ।। छतियाँन सबै बतियां तुम जानत, कैसे प्रवीन लिखैं पतियां ।।

सवैया ।।१९०

बैर हि बैर मिलाप नहीं, कहा पाप किये तुम सैं दिल लायो ।। तेरो तो जीव कठोर कियो, अरु मेरो हियो बिधि लौन्यों बनायो ।। मेरो तो जीव बसैं तुम में, तरसैं दोऊ नैन तृषा मनु तायो ।। मैं जो निदान कियो चितमें, यह प्रीति करी नहिं बैर बिसायो ।।

सवैया ।। १९१ ।।

जो तुम नेह कियो मम मिंतर, अन्तर क्यों अब राखत माँहीं।।ऐसे तो न बनैं यह बात, जो नांचत घूँघट दोउ रहां हीं ।। कै तो मिलो गर लाग वें प्रीतम, कै तुम नाँट निराट जु जाहीं ।। उत्तर दान समान जो जानहु, सज्जन फेरि सो बोलत नाहीं ।।

सवैया ।। १९२ ।।

अँखियां कर प्रीति प्रतीत भरी, यह लीं ललचाय निहोरिये क्यों ।। बरसाय महा रस बूंदन को, रस रीति भरे तरु तोरिये क्यों ।। रसरास रिझोह तरंगन छाय, हितूजन मीत मरोरिये क्यों ।। हित राखिबो जानत हो तोकहो, चित मोहि कै और को चोरिये क्यों ।।

सवैया ।। १९३ ।।

छूटि गई कुल कान सबै, अब तो चित ही सब तैं जो नठ्यो है । भूखन प्यास उदास रहैं, जु उसासन ते तन जात घट्यो है ।। नेह निदान कियो तुम सैं, सगरे जगसैं हिये हेत फट्यो है ।। लोग सबै पगिया पलटैं, हम तो जियरा पलट्यो है ।।

सवैया सिंहाविलोकन ।। १९४ ।।

सावन की ऋतु आई सखी, पतियां न लिखी अज हैं मन भावन ।। भावन राग मलार में भूपति, रंग उमंग सैं लागि हैं गावन ।। गावन में बरसै हरषै, बर बूँद घटा जु लगी बरसावन ।। बरसावन जोग्य भयो नहिं पीउ, सु जीवको जीव लग्यो तरसावन ।।

कवित्त ॥ १९५ ॥

लिखत ही पाती छाती फाट गई लेखनि की, देखन की हैंस भई सुने न पत्याय हो ॥ नैंकु रह्यो स्वास निकसन ए साहस अब, कहां लगि लिखैं। आँक बाँचे अकुलाय हौ ॥ अधर बसे हैं प्रान आइ वेगि लैहो सुधि, याते हैं। अधीर फेर पीछे पछिताय हो ॥ तेरी सौंह प्यारे मोहि मरन को दुख नाहीं, दुख तो यही है तुम सुने दुख पाय हो ॥

कवित्त ॥ १९६ ॥

लेके हाथ पाती को चढ़ाय लई सीस ही पै, लोचन छुवाय कर छाती सों लगाई है ॥ कछू जिय हरषत कछु कछू धरकत, खोलत ही फैल गई बिरह बलाई है ॥ बाँचत ही अकल बिकल भई छिन ही में, लालन के अंक बीछू डंक से लखाई है ॥ ऐसी ही सुहाई उन एतो ही कहन पाई, हियो भरि गयो और आँखैं भरि आई है ॥

कवित्त ॥ १९७ ॥

लाखन सँदेशे अभिलाष भाँति भाँतिन के, हिये में बढ़त जात सुधि के करत ही ॥ कागज़ गिरत कहूं कहूं को गिरत हाथ मन कहूं मदन के लागत सरत ही ॥ ब्याकुल रहत कछू काहू सों कहत नाँहिं, जहां जहां देखैं आगि बिरहै बरत ही ॥ पतियां को लिखबो कठिन अब भयो प्यारे, अँखियाँ भरत आवैं लेखन भरत ही ॥

कवित्त ॥ १९८ ॥

सिद्ध श्री नेही लाल रसिक रसाल जोग्य, लिखत वियोगिनि को पायन परस है ॥ वहां की कुशल पल पल चहैं प्यारे लाल, यहां की कुशल देखे रावरो दरस है ॥ अबैंचि अब लों तो ध्यान करि के राखे प्रान, अब हैं नि-दान याते वेगि मिले रस है ॥ कागद कहाँलों लिखैं, नागर नवेले, सुख सागर, पियारे बिन छिन ही बरस है ॥

कवित्त ॥ १९९ ॥

हमको तुम एक तुमको हमसे अनेक, ताहू मांझ मोको तुम दास कर

जानियो ।। दामन तिहारे निशदिन जो लग्यो ही रहों, काहू के कहे सुनेते भृकुटी न तानियो ।। साहब सुजान सब गुनन के आगर हो, भूलि हू न मोपै कभू रीस मत आनियो ।। जो पै दिल लियो है तो लिये को निवाह कीजो, एही एक बीनती हज़ार कर मानियो ।।

कबित्त अन्योक्त ।। २०० ।।

हारे बटबारे जे धिचारे मंजिलन मारे, थकित महारे तिनको न सुखतै दियो ।। बन हू के पच्छिन को काम कभू सरयो नाहिं,सुबेह श्याम आय तो में बिसराम ना लियो ।। आपने हू तनकी ना साया कर सक्यो मूढ़, 'दयानिधि" कहैं जग जनम तैं वृथा लियो ।। घाम आड़ भयो नाँहिं फल फूल को न लाह एरे ताड़ वृच्छ तैंने बढ़ के कहा कियो ।।

कबित्त ।। २०१ ।।

केती खुशबोई खूबसूरत मलक सेती, होता है खुशाल दिल देखि परबीन का ।। रंग को लखत खुश वख़्त बखानता है, कीरति कदम्ब मद मोकल अलीन का ।। चटकीले गात पै चशम खुलजात, मखतूल सम पात जिमि हौंठ जुवतीन का ।। एरे गुलज़ार गुन ग़ालिब गुलाब तुझे, होवेगा जिहान में गुमान दिन तीन का ।।

कबित्त ।। २०२ ।।

अरे बीर बायस तुम बैठे मकरंद जुत,पुहुप सैं भरे हो मकरंद के ठिकाने हो ।। अबै तुम बोलो जिन छिमाँ करो छिन इक, सब जन मिलि तुम्हैं कोकिलप्रमाने हो ।। यामें नहीं शंक कछु बड़ेन के सँग हू ते, छोटे की बड़ाई होत ताते तुम माने हो ।। भूपति के भाल बिंदु कीच हू को होइ तिन्हैं, मृग मद जानैं सब तैसे तुमजाने हो ।।

सवैया ।।२०३।।

धूसर कंठ कठोर महासुर , एकहि लोचन रंग है कारो ।। नींच कहैं सब पच्छिन में, अरु भच्छ को साज कुचाल निहारो ।। आदर पाय दिना दस को, अभिमान बड़ो अपनें चित धारो ।। बायस जौलों सराध को पाख है, तौलौं हि है जग आध तिहारो ।।

कवित्त चिट्ठी ॥ २०४ ॥

सदा कृपानिधान हो, कहा कहूं सुजान हो, अमान दान मान हो, समान नाहिं दीजिये ॥ रसाल सिंधु प्रीति के, भरे खरे प्रतीति के, निकेत नीति रीति के, सुदृष्टि देखि जीजिये ॥ ठगी लगी तिहारिये, सु आय त्यों निहारिये, समीप ह्वै बिहारिये उमंग अंग भीजिये ॥ प्रमोद मोद छाइये, बिनोद को बढ़ाइये, बिलम्ब छांड़ि आइये, किधौं बुलाय लीजिये ॥

सवैया ॥२०५॥

बाहन धोबी कुम्हारन को, बिरच्यो विधि भार घनो धरवे को ॥ रोड़िन में गुज़रान सदा, करतो त्रन चाबि, छुधा हरिवे को ॥ आय तवेलन बीच बँध्यौ, तन पुष्ट भयो सब तें लरवे को ॥ क्यौं न तुरंगन को निदरै, गदहा मिले तोय चना चरवे को ॥

॥सवैया ॥२०६॥

हाथ गह्यो हरि ने हित सों, उत सागर लच्छ के आदि ददाई ॥ अम्बुज चक्रहु ते अधिके, गुन रावरे को पहुँचे न गदाई ॥ लायक के मुख लागत हो, तिन के मुख मौन रहो न कदाई ॥ जुद्ध असंख पै जीति बजे, पै रहे तुम संख के संख सदाई ॥

कवित्त ॥ २०७ ॥

एहो द्विराज महाराज बारनिधि सुत तोही सों कहत कर जोर आयो तो सरन ॥ तुम ही मित्र हो भ्रात हो धनंतर के, अमृत की रास सब औष धीन के भरन ॥ हौं तो देखि रावरे की एक ही कला सों लुभ्यो, जानत हो बड़े भये दै हो सुख अमरन ॥ अब तुम दिन दिन ज्यों हीं ज्यों बढ़न लागे, त्यों ही त्यों कलंक के बिकार लागे उघरन ॥

कवित्त ॥ २०८ ॥

बामन कहाय के सराहे परसत यासों, बेद मतवारे कहैं कैसे कै

सुधारि हैं ॥ पंडित धरम षट करम बखानत हैं, उदित छपाय ऐसे अवरन छा रहैं ॥ अबला औ दीनन को आतप करैया, राज नीति को न जानैं, आप चोरन सँचार है ॥ याही ते कलंकीकहायै द्विजराज यह, कैसो द्विजराज जाके सोरह कलार कहाये है ॥

छप्पय अन्योक्त ॥ २०९ ॥

सिंधु सुवन जग कहत, पुनैशिव सीस बिराजै ॥ लच्छ भ्रात बुध तात, कला षोड़स करि साजै ॥ औषधीश रजनीश ईश, तारागण कहिये ॥ सुधा द्रवन गिरबान, प्रान राखन, खग चहिये ॥ अब चन्द समों चूकस नहीं, करि उपकार जो करि सकै ॥ पुन्नम "प्रताप" अम्बर अबै, प्रात तोहि परिवा तकै ॥

कवित्त ॥ २१० ॥

शिव जू के भाल की हुतासन को सँग तो कों, ताते गुन जारबे को तोमें आनि कढ्यो है ॥ तहां बड़े विषधर रहैं जटा जूटन में, ताते डसबे के गुन गले फँसि मंढ्यो है ॥ बाडव औ हलाहल तेरे बड़े बांधब हैं, तिन को औगुन तोमें नीकै करि बढ्यौ है ॥ अबै चन्द मारिबो बियोगिनि को जोग्य तोकों, जन्म हीते आजु लगि यही विद्या पढ्यो है ॥

इति अन्योक्ति के कवित समाप्त ॥ अथ चंदमां पर कवित ॥

सवैया ॥ २११ ॥

रतनाकर जाहिर हैं जो पिता, विष अमृत हैं दोऊ बंधु हमारे ॥ ईश के शीश निवास किये, लक्ष्मी भगनी भगवंत के सारे ॥ अपनी प्रभुता में कहां लों कहों, सुर लागत हैं सब नाते हमारे ॥ राहु हमें जब आइ ग्रसे, तब कोऊ न होत सहाय हमारे ॥

सवैया ॥ २१२ ॥

बिष्णु को सारो सिंगार महेश सागरको को, सुत लच्छिको भाई॥तारन को पति, देवन को गन लोगन को है महा सुखदाई ॥ "भीषम" आन गह्यो

जब राहु, सकै छिन एकन कोऊ छुड़ाई ॥ जा दिन हैं दुख के सुन रे नर, तादिन होत न कोऊ सहाई ॥

कवित्त ॥ २१३ ॥

चंद को कलंक कहो कैसे नहीं जात हरि, वापैना कहावत प्रभु केरो निज तात है ॥ भगनी रमासी अरधंगी अविनासी, जाके सोई दिन रैन प्रति काहि लैं बढ़ात हैं । सागर सो तात पै कही न जात ऐसी बात सोहैं सदा हर के समीप निज माथ है ॥ ऐसेहु बसीले पै विचार सब भाग ही को, चंद को कलंक सो तो काहू पै न जात है ॥

सवैया ॥ २१४ ॥

देश फिरयो परदेश फिरयो, अरु सिंधु में सैंकड़ों गोते लगाये ॥ जाय सुमेर पै वास कियो, अरु सोने के ढेर के ढेर उठाये ॥ काशी फिरयो, कशमीर फिरयो, इहिं भागने लाखन फेर फिराये ॥ भाल लिख्यो सो मिटै न कभू नर, भाग बिनां फिरै भांग सी खाये ॥

सवैया ॥ २१५ ॥

कर्म प्रताप तुरी को खिलावत, कर्म से छत्रपती पुनि होई ॥ कर्म कपूत सपूत कहावत, कर्म समान सगो नहिं कोई ॥ कर्म फिरयो जब रावन को तब, सोने की लंक कलंक लै खोई ॥ आप गुमान कहा करे मूरख, कर्म करै सो करै नहिं कोई ॥

सवैया ॥ २१६ ॥

बादर से ज्यों छिपै न, छपाकर, छान छुपै न तरोवर छाये ॥ अंजन अंजित नैन छिपै नहिं, बैन छुपै नहिं मौन रहाये ॥ निन्दक से न छिपै पर कीरति, सांच छिपै नहिं झूंठ बनाये ॥ धूम हि से जिमि आग छिपै नहिं, भाग्य छिपै न बिभूति लगाये ॥

सवैया ॥ २१७ ॥

ब्रह्म ललाट लिख्यो जोई केशव, टार सकै कहो कौन है ऐसो ॥ राम रमंत, ज़ोरावर राघव, भावी सों न बच्यो कोई कैसो ॥ कृष्ण बिदेश फिरे पंच पांडव, राजन को सु लह्यौ फल तैसो ॥ बार अनेक भयो अस केसव, काहे को जीवन कीजे अँदेशो ॥

सवैया ॥२१८॥

इक छत्र की छाँह विनोद करै, इक नाज के काज फिरच दुखारी ॥ एक त्रिया बहु पुत्र रमें, इक छोटो सो कंत बड़ी बहु नारी ॥ इक चंचल तेज तुरंग चढ़ै, इक मांगत भीख फिरैं ज्यों भिखारी ॥ कवि ब्रह्म भनै गिरि मेरु टरैं, पर कर्म कि रेख टरै नहिं टारी ॥

सवैया ॥२१९॥

देन चहै करतार जिन्हें सुख कौन,रहीम सकै तिहिं टारै ॥ उद्यम पौरुष कीने बिना, धन आवत आप हि हाथ पसारै ॥ देव हँसैं सब आपुस में, बिधि के परपंच न कोउ निहारै ॥ बेटा भयौ बसुदेव के धाम औ दुंदभि बाजत नन्द के द्वारे ॥ (एक यह भी तुक है,) बालक ×आनकदुंदभी के भयौ दुंदभी बाजत आनके द्वारे ॥

कवित्त ॥२२०॥

बड़ेन सौं जान पहचान कै रहीम कहा, जोपै करतार ही न सुख देन हार है ॥ सीत हर सूरज सों नेह कियौ याही हेत, ताहू पै कमल जार डारत तुषार है ॥ चीर निधि माहिं धस्यौ शंकर के सीस बस्यौ, तऊ ना कलंक नस्यौ सीस में सदा रहै ॥ बड़ौ रिझवार है चकोर दरबार है, कलानिधि सौ यार तऊ चावत अँगार है ॥

कवित्त ॥२२१॥

जानत हों जोतिष पुरान वेद बाँचत हैं, जोर जोर अच्छर कबित्तन को

× आनक दुंदभी = बसुदेव ।

उच्चरों ।। नैठि जानों सभा में, रिझाय जानों राजन कों, कुआ तलाब बावरी निवान नदी में तिरों ।। गावों मैं सुराग, दौराऊं मैं घोरा बाग, शस्त्र बाधि खेत माझ सूरन सों हों लरों ।। देश वा विदेश फिरि आयौ हौं दीनानाथ, कर्म देन वारी तो वाकों मैं कहा करों ।।

कवित्त ।।२२२।।

आदर के भूखे, प्यार करै ताकी पांव खाक, दुरजन के दोषी सदा सज्जन के यार हैं ।। चाहे जाके चेरे हैं न चाहे जाकी छाती साल, चतुर के चाकर पुनीति प्रति पार हैं ।। राग के हैं आशिक नफ़र खूबसूरत के, आछी नीकी बातन के रिझक रिझार हैं ।। कहत करीम बहनोई बुरी गार के हैं, सूम के जमाई ऐसे किये करतार हैं ।।

नीति वा शिक्षा के कवित्त ।

छप्पय ।।२२३ ।।

तृष्णा को तजि देहु, क्षमा कौ भजन करहु नित ।। दया हिये में राखि, पाप सों दूर राखि चित ।। सत्त्य बचन मुख बोलि, धर्म्म धीरज जिय धारहु ।। सत पुरुषन की सेव, नम्रता अति बिस्तारहु ।। सब गुणसु आपने गुप्त रखि, कीरति पर पालन करहु ।। करि दया दुखित नर देखि के, सन्त रीति यह अनुसरहु ।।

छप्पय ।।२२४।।

भयौ लोभ मन माँहि कहा तब औगुन चहिये ।। निन्दा सबकी करत, तहाँ सब पातक लहिये ।। सत्य बचन तप जानि, शुद्ध मन तीरथ जानहु ।। होत सुजनता जहाँ, तहाँ गुणप्रगट प्रमानहु ।। जस जहाँ कहा भूषन चहै, सद् विद्या जहँ धन कहा ।। अपजस जु छयो या जगत में, तिन्हें मृत्यु ही है महा ।।

छप्पय २२५

उत्तम नर पर अर्थ करत, स्वारथ को त्यागत ।। धारत पर को अर्थ, करत स्वारथ अनुरागत ।। दुष्ट जीव निज काज, करत पर काज बिगारत ।।

वे नहिं जाने जात, रूप चोथे जे धारत ॥ जिनको न होय निज काज कछु, औरन के स्वारथ हरत ॥ तिन को न दर्श छिन देहु प्रभु, बात सुनत ही चित डरत ॥

छप्पय ॥ २२६ ॥

विद्या नर को रूप, प्रगट विद्या सु गुप्त धन ॥ विद्या सुख यश देत, संग विद्या सु बंधु जन ॥ विद्या सदाँ सहाय, देवता हू विद्या यह ॥ विद्या राखत नाम, लसत विद्या ही तें गृह ॥ सब भाँति सबन सों अति बड़ी, विद्या को कवि जन कहत ॥ शिव विष्णु हु विद्या वस करत, नृपति न्याय विद्या चहत ॥ ४ ॥

छप्पय ॥ २२७ ॥

कुछित मंत्री भूप, संत विनसत कुसंग ते ॥ लाड़ लड़ाये पूत, गोत कन्या कुढंग ते ॥ विन बिद्या ते बिप्र, शील खल संग किये ते ॥ होत प्रीति को नाश, बास परदेश किये ते ॥ बनिता विनाश सद हाँस ते, खेती विन देखे द्रगन ॥ सुख जात नए अनुराग ते, अति प्रमाद ते जात धन ॥

छप्पय ॥ २२८ ॥

हय कठोर परहरिय, नेग परहरिय कुबुद्धी ॥ तिय चंचल परहरिय, बंधु परहरिय बिरुद्धी ॥ कपटि मित्र परिहरिय, पुत्र परहरिय कुकरमी ॥ गाँव सोई परहरिय, जहाँ बहु बसें अधरमी ॥ परहरिय सर्प जिमि कंचुरी, भूल न इन संगति करिय ॥ बसिये न निकट तँह गोप भनि, झूँठों ठाकुर परहरिय ॥

छप्पय ॥ २२९ ॥

नहिंन त्याग सम सुक्ख, राज सम दुक्ख न कोई ॥ नहिंन ज्ञान सम चक्षु, सत्य सम तप नहिं होई ॥ नहिं ममता सम भार, नहिं विचार सम मञ्जन ॥ नहिं हरि सम कोउ हितू, नहिंन साधन सम सज्जन ॥ नहिंन भंग संसार सम, बंधन लालच काम क्रम ॥ नहिंन राम सम ऊँच पद, नहिंन भाग वैराग सम ॥

छप्पय ॥ २३० ॥

कृपण बुद्धि जस हरै, कोप दृढ़ प्रीति बिछोरै ॥ दम्भ बिधुंसै सत्य, सुधा मरयादा तोरै ॥ कुबिसन धन चय करै, विपति थिरता पद टारै ॥ मोह मरोरै ज्ञान, विषय शुभ ध्यान बिडारै ॥ अभिमान बिछेदै विनय गुन, पिसुन कर्म गुरुता गिलै ॥ कुकथा अभ्यास नाशै सुपथ, दारिद सों आदर बिलै ॥

छप्पय ॥२३१॥

मूढ़❀ मसखरा, त्रिया दुष्ट, मानी गृहस्थ नर ॥ नर नायक आलसी, बिपुल धनवंत कृपन कर ॥ धरमी दुसैह स्वभाव, वेद पाठी अधर्म रत ॥ पराधीन शुचिवन्त, भूमि पालक निंदेस हत ॥ रोगी दरिद्र पीड़ित पुरुष, वृद्ध नारि, रस ग्रत्थ चित ॥ एते बिडंब संसार में, इन सब को धरकार नित ॥

छप्पय ॥ २३२ ॥

तिये बल जोबन समय, साधु बल पंथ बिशंभर÷॥ नृप बल तेज प्रताप, दुष्ट बल बचन अडम्बर ॥ निरधन बल सु मिलाप, दानि सेवा जाचक बल ॥ बानिज बल ब्यौहार, ज्ञान बल बर बिवेक दल ॥ विद्या विनय उदार बल, गुन समूह प्रभु बल दरब ॥ परिवार सुबल सुविचार कर, होहिं एक सम्मत सरब ॥

छप्पय ॥ २३३ ॥

बिमल चित्त कर मित्र, शत्रु छल बल बस कीजिये ॥ प्रभु सेवा बस करिय, लोभवंतहि धन दीजिये ॥ युवति प्रेम बस करिय, साधु आदर बस आनिय ॥ महाराज गुन कथन, बन्धु समरस सनमानिय ॥ गुरु नवत सीस, रस सौं रसिक, विद्या बल बुधि मन हरिय ॥ मूरख विनोद बिकथा बचन, शुभ स्वभाव जग बस करिय ॥

छप्पय ॥ २३४॥

जाचक लघु पद लहै, काम आतुर कलंक पद ॥ लोभी दुरजस लहै

❀ मूढ तथा मसकरति [पाठांतर] ÷ शिव पथ सबर [पाठांतर]

असन लालची लहै गद ।। उन्नमत लहै निपात, दुष्ट परदोष लहै तकि ।। कुमन विकलता लहै,लहै संसय जुरहै छकि ।। अपमान लहै निरधन पुरुप, ज्वारी बहु संकट सहै ।। जो कहै सहज करकस वचन, सो जग अप्रिय-ताल है ।।

छप्पय ।।२३५ ।।

ग्यानवंत हठ गहै, निधन परिवार बढ़ावै ।। विधवा करै गुमान, धनी सेवक हुइ धावै ।। वृद्धन समझै धर्म्म, नारि भरता अपमानै ।। पंडित किरिया हीन, राव दुर बुद्धि प्रमानैं ।। कुलवंत पुरुष कुल विधि तजै, बन्धु न मानैं बन्धु हित ।। संन्यास धार धन संग्रहै, ए जग में मूरख विदित ।।

छप्पय ।। २३६ ।।

नर पति मंडन नीति, पुरुष मंडन मन धीरज ।। पंडित मंडन विनय' ताल सर मंडन नीरज ।। कुल तिय मंडन लाज, बचन मंडन प्रसन्न मुख ।। मति मंडन कवि कर्म, साधु मंडन समाधि सुख ।। भुज समर्थ मंडन छमा, गृहपति मंडन बिपुल धन ।। मंडन सिधांत रुचि "संत" कहिं, काया मंडन नव नयन ।।

छप्पय ।। २३७ ।।

कठिन प्रीति की रीति, कठिन तन मन बस करिबौ ।। कठिन है कर्म्म निर्कंद कठिन भव सागर तरिबौ ।। कठिन कष्ट में दान, कठिन समरथ में समता ।। कठिन है पर उपकार, कठिन मन मारन ममता ।। अरु बचन निबाहन अति कठिन, निधन नेह पालन कठिन ।। (है) चंचल मन निश्चल कठिन, ज्ञान जुद्ध जीतन कठिन ।।

छप्पय ।। २३८ ।।

नग्न कहन बिन रहन, नग्न मंजन बिन मौनी ।। नग्न वेद बिन विप्र, नग्न व्यंजन बिन लौनी ।। नग्न चन्द बिन रैन, नग्न कमलन बिन सागर ।।

* [पाठांतर] सज्जन धन

नग्न गुनी बिन पुरी, नग्न क्षत्री रण कायर ॥ रूपवंत गुन बुद्धि बिन, हरि सुमिरन बिन नग्न जन ॥ बेताल कहै विक्रम सुनो, नग्न देह संतोष बिन ॥

छप्पय ॥२३९॥

बचन छल्यौ बलिराज, बचन कौरव कुल खोयौ॥ बचन काज हरिचंद, नीच घर नीर समोयो ॥ बचन काज श्रीराम बिभीषन लंका थरप्यो ॥ बचन दियो जगदेव, सीस कंकाली अरप्यो॥ बेताल कहै विक्रम सुनो, बोल बचन नहिं पलटिये ॥ बचन जाय जा पुरुष को, कर गहि जीभ सु काटिये ॥

छप्पय राजनीति ॥॥२४०॥

प्रात धर्म चिन्तवन, सहज हित मंत्र विचारै ॥ चर चलाय चहुं ओर, देस पुर प्रजा सँभारै ॥ राग द्वेष हिये गुप्त, बचन अमृत सम बोलै ॥ ठौर समय पहिचानि, कठिन कोमल गुन खोलै ॥ निज जतन करै संचै रतन, न्याय मित्र अरि सम गिनै ॥ रण में निशंक ह्वै संहरै, सो नरेंद्र रिपुदल हनै ॥

छप्पय ॥२४१॥

सिथल मूल द्रढ़ करे, फूल चूँटे जल सींचे ॥ उरधै डारि नवाय, भूमि गति उरधहिं खींचै ॥ जो मलीन मुरझाइ, टेक दै तिनहिं सँवारे ॥ कूरा कंटक गलित, पत्र बाहिर चुग डारै ॥ लघु बृद्ध करै भेदै युगल वारि सँवारै फल भखै ॥ माली समान नृप जो चतुर, सो सम्पति बिलसै अखै ॥

कवित्त ॥ २४२ ॥

छोटे छोटे गुलन को सूलन की बारि करैं, पातरे सेपौधे पानी पोखि करि पारिबो ॥ फूली फुलबादन के फूल चूंट लेवे खरे, घने दरखत एक ओर ते उखारिबो ॥ नव परे पायन ते टेक देय ऊंचे करै, ऊँचे नढ़ि जायँ ते ज़रूर काटि डारिबो ॥ राजन को मालिन को दिन प्रति "देबीदास" चारि घरी राति रहे इतनों विचारबौ ॥

छप्पय ॥ २४३ ॥

बात २ में तर्क, करै निज मुख प्रभुताई ॥ जन जन तें मित्रता, जुगल बाँधै समुदाई ॥ सब कामन में अरुचि, दाय आनै न महा पटु ॥ आलसि बिपुल असाधु, कहै दुरवाद बैन कटु ॥ यों राज नीति चानक्य कहै, जग प्रसिद्धि शिक्षा परम ॥ राखिबे योग नाहीं नृपति ऐसे पट सेवक अधम ॥

कवित्त ॥२४४॥

सुमती जती संग ते ज्यों कुमती अनंग ते, औ, पाप नीर गंग ते धन बढ्यौ जु पहार ते ॥ ज्यों कुल कपूत ते ज्यों दारिद सपूत ते, ज्यों ब्रहमन को पूत बिना पढ़े चटसार ते ॥ देखे बिन खेती जैसे सावन में रेती, और बातें कहौं केती जैसे तारा लोभ धार ते ॥ सावधान हूज्यौ ताहि देस ते निकारि दीज्यौ, बूड़ि जै है राज जैसे मन्त्री दुरा चार ते ॥

कवित्त ॥२४५॥

नीच सों न प्रीति कीजो कुल को न छाँड़ि दीज्यो, बैर पुनि लोभ जिन करो पर नारि को ॥ आन तिय मात गिन, बाते घर बढ़े धन, त्यों २ नीचो हूज्यो औ बटैया पर पीर को ॥ बैरिन को सूर कूर मंत्रिन निकार दीज्यो, पीज्यो ना अपीय दुख परे हूज्यो धीर को ॥ दीन पुरहूत सों न दूत बस हूज्यो भाई, भरत सपूत कह्यो कीज्यो रघुबीर को ॥

कवित्त ॥ २४६ ॥

सुघर सिलाह राखै, वायु बेगि बाह राखै, रसद की राह राखै, राखे रहै बन को ॥ राग को समाज राखै, बाज और नाज राखै, खबर के काज बहु रूपी हर फन को ॥ अगम भखैया राखै, सगुन लिवैया राखै, कहै 'रघुनाथ'

औ बिचार बीच मन को ॥ बाजी हारे कबहुन औसर के परे जौन, ताज़ी राखै परजन, राजी सुभटन को ॥

कवित्त राजनीति ॥ २४७ ॥

मेटवे अनीत रीत नीत को बनाय लोक, क्रूर क्रोध मेटिवे को क्षमा जो अनूप है ॥ रोग दोष मेटिवे को औषद प्रयोग मंत्र, लोभ क्षोभ मेटिवे को तोष अनुरूप हैं ॥ कलि काल आपदा उपद्रव अनेक देखि, तामें न अधार व्रज एको हिंद भूप है ॥ नीरज अयन जग पीरज के राखिवे को, रूप धारी धीरज बनायो नृप रूप है ॥

कवित्त ॥ २४८ ॥

बारन में बन्धन, औ दण्ड जोग धारन में, मान बनिता में, मद राजै गजराज में ॥ रोगी ग्रंथ वैदिक, बियोगी चक्र चाक रैन आँधरो उलूक, लुकं घोस ही के छाज में ॥ परदेश चोरी ब्याज निन्दा अलंकार 'व्रज,' नाहिं नवलाके सुख केलि कला काज में ॥ बागन में बेर, ऐंच पैंच परे पागन में, भीत है दिवार, राज नीति ऐसी राज में ॥

कवित्त ॥ २४९ ॥

जहाँ जहाँ घने जने बैठैं प्रीत जोर जोर, उनको करोर भाँति फोर फोर दीजिये ॥ दाना देखि देखि कें बुलाय आगे लीजिये जू, मूरख को देखि कैं हटाय दूर कीजिये ॥ दीन ही परेख देख उनको बढ़ाय दीजै, बढ़ बढ़ गये वाको बाढ़न न दीजिये ॥ राज नीति राज बन्सी राजन कू जस्स राम, करबे के कहेजेते, ऐते सब कीजिये ।

कवित्त राजनीति ॥ २५० ॥

दाव ले बकार पाँच पाँच १ पुनि २ चूकै मति, छाँड़िदे चकार चार, ३ चारन में बसिये ४॥ भूले मत द्वै दकार, ५ भूलजा दकार सात, ६ तीनन में हिल मिल ७ अति हू न फसिये ॥ हा हा चार ८ परिहरि तीन हा हा ९ मान लेहु, भूल छः मकार, १० मन कबहू ना गसिये ॥ 'देवी' कीजे द्वै ११ उकार लै भकार तीनन पै १२ एक या नकार माँझ सारो गुन नसिये ॥

कवित्त नीति ॥ २५१ ॥

कै तौ ना लगावै नेह कोऊ नर नारी साथ, जो पै प्रीति जोरै तौ कछू हो फेरि तोरै ना ॥ रसिक विहारी काहू बचन न हारै कबों, जो पै बैन देवै तो बहोरि द्रग चोरै ना ॥ कै तो प्रण कैस हू न ठानैं रश्च बात हू को, जो पै धारि लेवै बानि पुनि हठ छोरै ना ॥ सोई है त्रिशुद्ध औ प्रबुद्ध रण रुद्ध उद्ध, रिपु तैं, बिरुद्ध क्रुद्ध युद्ध मुख मोरैना ॥

कवित्त ॥ २५२ ॥

एह प्रभु ताकौ, सो कसन प्रभुता को त्यागैं, छाँड़ी नाबिभूती तो बिभूती कहा धारी है ॥ जौलों भग तजी नाँहि, तौलों भगत जी नाँहिं, काहे को गुसाँईं जो गुसांई सों न यारी है ॥ काहे को विराहमन, जाको है बिराह मन, कहा पीर जो पै पर पीर ना विचारी है ॥ कैसे वे हैं योगी जन, जिन को न योगी मन, आसनहिं मार जान्यो, आस नहीं मारी हैं ॥

कवित्त ॥ २५३ ॥

स्वारथ में मन जात, लूट परे धन जात, मित्र मँगे पन जात, नेह बुरी बानी में ॥ बूढ़े भये बल जात, रोग आये छल जात, राम रटे स्वर्ग जात, यही बात जानी मैं ॥ दीपक सो अन्ध जात, फूटे घर वन्द जात, मावस में

---

१ बैर, व्याध, बाद, बैसांदर, बुराई = २ बल, बोल, बान, बिद्या, बड़ाई = ३ चोरी चुग़ली, चिन्ता, चपलता = ४ चलन, चेष्टा, चौकस, चतुराई, = ५ दया, दान, ६ दुख, दोष, दम्भ, दुष्टता, दीनता, दुबध्या, दरिद्रता = ७ देह, दारा, द्रव्य = ८ हठ, हांसी, हीनता, हत्या = ९ हरि, हरष, हेत = १० मान, मद, मोह, मूरखता, मलीनता, मलेच्छता = ११ उद्यम, उपकार = १२ भात्र, भक्ति, भूमि =

चन्द जात, यही पहिचानी मैं ॥ दिन जात रात जात, घरी पल छिन जात, आयु जात ऐसे, जैसे नाव जात पानी में ॥

कवित्त ॥ २५४ ॥

जार को विचार कहा, गनिका को लाज कहा, गदहा को पान कहा, आँधरे को आरसी ॥ निगुनी को गुन कहा, दान कहा दारिदी को, सेवा कहा सूम की अरंडन की डार सी ॥ मद पी को शुचि कहा, सांच कहा लम्पट को, नीच को बचन कहा, स्यार की पुकार सी ॥ 'टोडर' सु कबि ऐसे हठी ते न टारे टरै, भावै कहौ सूधी बात भावै कहो फारसी ॥

सवैया प्रस्थावी ॥ २५५ ॥

आस कौ दास रहै जबलों, तबलों जग को नर दास कहावै ॥ त्यागी गुणी कवि पंडित कोऊ हो, आस लिये सब को भरमावै ॥ स्वर्ग महीतल बास कहूं करो, आस जहाँ लगि नांच नँचावै ॥ तातें सदाँ सुख पाय निरास में, आस तजे भगवान को पावै ॥

कवित्त ॥ २५६ ॥

सुत हेत केकई ने रामैं बनवास दियौ, मर्यौ पति, भयौ अति अजस जगत में ॥ सतरा जित मणि हित हरिको लगई चोरी, बंधुन सहित उपहास भो जगत में ॥ कहत 'गुपाल' हरि भक्ति ही जो चाहे नर, या को तजि देय मन हरि में लगत में ॥ जैसे फल लगे पीछे पहले फूल लागत है, तैसे सब पाप मूल लोभ है जगत में ॥

सवैया ॥ २५७ ॥

प्रीति बिछोरत जोरत जुद्ध, बिरोध बढ़ाय किये चित कारे ॥ जे बन माँहिं करैं तपस्या द्रढ़, ते बहु संजम ते इन टारे ॥ ध्यान डुलावत चित्त

चलावत, साधत जाय घने पचि हारे ॥ एक बुरो सिगरे जगमें, यह लालच काम विगारत सारे ॥

कवित्त ॥ २५८ ॥

बात विन रोस ठानें, सब ही सों डर मानें, शास्त्र को न जानें, ताके संगत न छीजिये ॥ आलस में चूर, पर निन्दा भरपूर, आय समों परैं दूर, ताके रंग में न भीजिये ॥ लाल बलवीर, मित्र द्रोही कृतघनी क्रूर, खसिया लबारन की, बात ना पतीजिये ॥ रसिक प्रबीनन सों, वीनती हमारी यही एतिन सों भूल ना, सुजान प्रीति कीजिये ॥

कवित्त ॥ १५९॥

कपटी, कठोर, दूत, लम्पट, लबार, दासी, पुत्र बेईमानन की, बातन न भीजिये ॥ गाड़ी बान, शुतर बान, ड्योढ़ी बान, सार बान, कूंजरे भटयारेन सों, नैंक न लरीजिये ॥ निपट निगोड़े, कटि छोटे, काने, लूले, चोर, मंजर चटोरे हू को, नैंक न पतीजिये ॥ " जै किशन " कहै ऐतो बीस जीब गिन राखे, दाव परे इतने की संगति न कीजिये ॥

कवित्त ॥ २६० ॥

जासों अति प्रीति सब जग में विदित होय, तासों पुनि बैर होय दोऊ दाय छीजिये ॥ देवीदास कहै जो जहाज को विनज करै, धुरति कहावै ताकी बात नहीं धीजिये ॥ जाने कभू पहले कदापि चोरी करी होय, कुल शील रहित विचार कर लीजिये ॥ सुख चाहै आपनों तो, सबन सों सीख य है, इतने मनुष्यन की संगति न कीजिये ॥

कवित्त ॥ २६१ ॥

बालक सों, बाला सों, कुबुद्धी, मतवाला सों, जु बिकट, बिटन्डी बिक-ालन, पतीजिये ॥ अजसी, कठोरा, हू सों पाखन्डी, ठगोरा हू सों, अचर

के जोरा हू सों, हार चित्त दीजिये ।। अति मित मीतन सों, आतुर अतीतन सों, बिच्छु भय भीतन सों, देखि दाव लीजिये ।। गुरु सों, पिता सों, पर पिता, महाराजन सों, देवन सों, सुख देव हठ हू न कीजिये ।।

कवित्त ।। २६२ ।।

देवन सों, द्विजन सों, मान भाव, सिद्धन सों, निकट न दूर मध्य भाव सों निवाहिये ।। बैरिन सों, नारिन सों, ठगन सैंचारन सों, प्रबल सों, कटुता के बचन न कहिये ।। जल से, अगिन से, सुजीरन इमारत से, धार से बचाय हाथ, तलवार गहिये ।। सिंघन से, सरपन से, मस्त गजराजन से, राजन से, " सुखपुंज " सावधान रहिये ।।

सवैया ।। २६३ ।।

आछयो करे पै बुरो समुझै, भलो प्यार करे पै बिगार करीजै ।। जो उपकार को मानैं नहीं, दुखी दीन को देखि दया में न भीजै ।। झूँठो छली, निरदय, कपटी मन, चोर कुकर्मी को कोउ न धीजै ।। आपनों चाहै भलो जो गुपाल, तो भूल के ऐसे को संग न कीजै ।।

कवित ।। २६४ ।।

क्रूरन सों, मनके गुरून सों, पात की सों, बिषई मतवारे सों, मिल के न भीजिये ।। बोल के चिल चिले सों, बेद पथ के हिले सों, मित्र छिल छिले सों, कबहू नहि धीजिये ।। चोरन सों, जारन सों, लम्पट लवारन सों, रहिये बिलग, जग जब लग जीजिये ।। देह धर ' देवीदास ' सुख चाहो आपनो तो, इतनें मनुष्यन सों, संगत न कीजिये ।।

सवैया ।। २६५ ।।

हे रघुनाथ सुनो मन दै गुन, वास किये सत संग के पास को ।। छोटे बड़े पद को पहुंचैं; जस पावत हैं प्रभु ताके अभास को ।। याको न मानिये

झूंठ कछू, ये दंत कहे निज बुद्धि बिलास को ।। पान के साथ व्है जात लखं छित नाथ के हाथ में पात पलास को ।।

सवैया ।। २६६ ।।

जो शिव के चरणाम्बुज में, अपनो मन देय कछू अनुराग्यो बसुधा बिच ऐसो भयो, जिहिं को चहुं चक्रन में यश पाग्यो ।। देखो अ कलानिधि को, 'रघुनाथ' सुनो चढ़ि सीस पै जाग्यो ।। जैसे को तैसो क लाग्यो रहि, संगत को गुन नैंकन लाग्यो ।।

सवैया ।। २६७ ।।

धूरि चढ़े नभ पौन प्रसंग ते, कीच भई जल संगति पाई ।। फूल मिले नृप पै पहुंचे, क्रम कीटन संग अनेक बिथाई ।। चन्दन संग कुदारु सुगंध व्है, नीम प्रसंग लहै करुवाई ।। 'दास जु' देख्यो सही सब ठौरन, संगति को गुन दोष न जाई ।।

छप्पय सतसङ्ग ।। २६८ ।।

लियौ नीम सत संग, भयो मलिया ढिंग चन्दन ।। लोहा पारस परस, सरस दरसत हो कुन्दन ।। मिलै सुरसुरी नीर, सीर निहचै सो गङ्गा ।। मिसरी सों मिलिबाँस, तुल्यो ताही के सङ्गा ।। लोह तर्यो नवका मिले, साख सकल सुनि लीजिये ।। बदत भीख जन जगत में, जान सुसंगत कीजिये ।।

सवैया ।। २६९ ।।

है सत संग बड़ो जग में, हरि अंकित सिंधु सिला उतराने ।। पारस के परसे तन लोह, दिपै दुति हेम स्वरूप समाने ।। 'गंग' कहै मलयाचल पात, छुये तरु ईश के शीश चढ़ाने ।। कीट क्रमी अलि के परसंग, फिरैं अलि व्है मकरन्द छकाने ।।

इति "माथुर ज्ञान कवित संग्रह मुन्शी कन्हैयालाल माथुर" बसवा (जयपुर) कृत सम्पूर्णम् । शुभम् फरवरी सन् १६३५